परिप्रेक्ष्य

शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक–आर्थिक संदर्भ

वर्ष 25 अंक 1 अप्रैल 2018

प्रमुख आलेख

विनय कुमार कंठ
समानता, सद्भाव तथा उत्कृष्टता के लिए शिक्षा :
बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा

अशोक कुमार गाबा एवं **पी. प्रकाश**
कौशल विकास के लिए मुक्त शिक्षा संसाधन :
मुक्त विश्वविद्यालय का दृष्टिकोण

राघवेन्द्र प्रपन्न
भाषा–अध्ययन की ज्ञानमीमांसा :
विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के प्ररिप्रेक्ष्य में

तरुण कुमार शर्मा
भारतीय युवा शक्ति और रोजगार के अवसर

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान
NATIONAL INSTITUTE OF EDUCATIONAL PLANNING AND ADMINISTRATION

परिप्रेक्ष्य

शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक-आर्थिक संदर्भ

संरक्षक

एन.वी. वर्गीस

कुलपति नीपा

संपादकीय सलाहकार मंडल

साधना सक्सेना

श्रुति तांबे

अपूर्वानंद

संपादक मंडल

सुनीता चुग

मनीषा प्रियम

सविता कौशल

अकादमिक संपादक

सुधांशु भूषण

संपादक

सुभाष शर्मा

संपादन सहयोग

मनोज गौड़

उप प्रकाशन अधिकारी

प्रमोद रावत

प्रकाशन सहायक

अमित सिंघल

परिप्रेक्ष्य राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा) की चतुर्मासी हिंदी पत्रिका है। यह वर्ष के अप्रैल, अगस्त और दिसंबर माह में प्रकाशित की जाती है। संपादकीय विवरण के लिए कृपया आवरण (iii) देखें।

परिप्रेक्ष्य में प्रकाशित लेखों और अन्य सामग्री में व्यक्त विचार लेखकों के निजी विचार हैं। नीपा की नीतियों और विचारों से उनका कोई संबंध नहीं है।

परिप्रेक्ष्य

शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक-आर्थिक संदर्भ

वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

500 प्रतियां

© राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान, 2018
(भारत सरकार द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम 1956 की धारा 3
के अंतर्गत घोषित)

इस पत्रिका का प्रकाशन प्रति वर्ष अप्रैल, अगस्त और दिसंबर माह में किया जाता है। इसकी प्रतियां चुनिंदा और इच्छुक व्यक्तियों तथा संस्थानों को नि:शुल्क भेजी जाती हैं। यह नीपा की वेबसाइट: www.nuepa.org पर नि:शुल्क उपलब्ध है। इसे प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्ति और संस्थान निम्निलिखित पते पर आवेदन करें :

अकादमिक संपादक

परिप्रेक्ष्य

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा)
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा) के लिए कुलसचिव, नीपा द्वारा प्रकाशित तथा बचन सिंह, बी-275, अवन्तिका, सेक्टर-1, रोहिणी, नई दिल्ली द्वारा लेजर टाइपसेट होकर मै. पावर प्रिन्टर्स, नई दिल्ली में नीपा के प्रकाशन विभाग द्वारा मुद्रित।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

विषय सूची

आलेख

विनय कुमार कंठ
समानता, सद्भाव तथा उत्कृष्टता के लिए शिक्षा: बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा 1

अशोक कुमार गाबा एवं **पी. प्रकाश**
कौशल विकास के लिए मुक्त शिक्षा संसाधन: मुक्त विश्वविद्यालय का दृष्टिकोण 19

राघवेन्द्र प्रपन्न
भाषा-अध्ययन की ज्ञानमीमांसा: विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के प्ररिप्रेक्ष्य में 37

तरुण कुमार शर्मा
भारतीय युवा शक्ति और रोजगार के अवसर 47

शोध टिप्पणी / संवाद

कौशलेन्द्र प्रपन्न
शिक्षा अभियानों की आलोचनात्मक समीक्षा 59

संजीव कुमार शुक्ला
माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शिक्षा में सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन 67

बृजेश कुमार पाण्डेय
अध्यापक दबावग्रस्तता एवं व्यावसायिक मूल्य 81

विवेक कुमार
अधिगम और अध्यापन के परिप्रेक्ष्य में छात्र अभिप्रेरणा 89

समीक्षा लेख

कृष्ण कुमार केशरवानी एवं **जय प्रकाश सिंह**
सामाजिक शोध अध्ययन में शोध प्रविधि का प्रयोग 95

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

समानता, सद्भाव तथा उत्कृष्टता के लिए शिक्षा
बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा

विनय कुमार कंठ*

पाठ्यचर्या रुपरेखा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

स्कूली शिक्षा के संदर्भ में पाठ्यचर्या संबंधी बहसों ने हाल-फिलहाल अकादमिक क्षेत्र में काफी रुचि पैदा की है और कुछ विवादों को भी जन्म दिया है। इसे इस बात का सूचक माना जाता है कि स्कूली शिक्षा, खास कर इसकी गुणवत्ता से जुड़े पहलुओं को कितना महत्व दिया जा रहा है। शैक्षिक परिषदों और रणनीतियों के निर्माण में शिक्षण-अधिगम की विषयवस्तु और तौर-तरीके हमेशा से केंद्रीय महत्व के सवाल रहे हैं, फिर भी इस किस्म की बहस में नयापन है और वह अहम् भी है। शुरू में पाठ्यचर्या के नाम पर पाठ्यक्रम पर बहस होती थी और उसी का निर्माण किया जाता था, लेकिन अब इन दोनों के बीच स्पष्ट फर्क किया जाता है जो विविध मुद्दों के बारे में अलग-अलग समझ का संकेतक है, जिनमें शिक्षा के उद्देश्य और व्यवहार के तरीके भी शामिल हैं, क्योंकि ये शिक्षण की प्रस्तावित विषयवस्तु से सरोकार रखते हैं।

अपनी स्थापना के थोड़े समय बाद ही राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्यचर्या विकास, पाठ्यक्रम निर्माण तथा पाठ्यपुस्तकों समेत शिक्षण सामग्रियों की तैयारी की नोडल एजेंसी बन गया। कोठारी आयोग रिपोर्ट (1964-66) तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) के कुछ वर्ष बाद राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने 'दसवर्षीय स्कूल के लिए पाठ्यचर्या–एक रूपरेखा' 1975 में प्रकाशित की और उसके बाद 'उच्च माध्यमिक शिक्षा तथा इसका व्यवसायीकरण' (1976) का प्रकाशन किया। कोठारी आयोग की अनुशंसाओं के आलोक में 10+2

*शिक्षाविद् एवं स्वतंत्र लेखक, पटना, बिहार

रूपरेखा की पुनर्संरचना के अलावा क्रियाकलाप आधारित शिक्षा पर नया जोर दिया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) तथा क्रियान्वयन कार्यक्रम (1988) की रोशनी में 'प्रारंभिक और माध्यमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या: एक रुपरेखा' 2000 तैयारी की गई। इस दस्तावेज के आधार पर अनेक क्षेत्रों को बेहतर बनाया गया जिनमें अध्यापक शिक्षण, विद्यालयों में विज्ञान शिक्षा तथा समग्र और सतत मूल्यांकन शामिल हैं।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने दूसरी राष्ट्रीय पाठ्यचर्या वर्ष 2000 में तैयार की। उसमें यह कहा गया कि–

> ''यह आम स्वीकृति की बात है कि शिक्षा में पाठ्यचर्या का नवीकरण और विकास निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है और कोई भी सरकार इस मामले में ढिलाई नहीं बरत सकती है। पाठ्यचर्या ऐसी होनी चाहिए कि वह शिक्षार्थी की जरूरतों, सामाजिक अपेक्षाओं, सामुदायिक आकांक्षाओं और अंतर्राष्ट्रीय तुलनाओं को संतुष्ट कर सके। इसके अलावा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) तथा क्रियान्वयन कार्यक्रम (1992) की समीक्षा की तर्ज पर 'प्रारंभिक और माध्यमिक शिक्षा के लिए पाठ्यचर्या : एक रुपरेखा' को प्रकाशन के बाद से कोई समीक्षा नहीं हुई और इसीलिए यह वर्तमान प्रयास अनिवार्य बन गया। यह नवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002) के दस्तावेज (पृष्ठ 123) की सिफारिश के संगत भी है।''

वर्ष 2000 के दस्तावेज के प्रथम अध्याय में प्रासंगिकताएं, समता और उत्कृष्टता को पाठ्यचर्या के तीन प्रमुख स्तंभ बताते हुए इसके सन्दर्भ की व्याख्या की गई है और पाठ्यचर्या का खाका बनाया गया है।

पिछली पाठ्यचर्या की समीक्षा के ठीक पांच वर्ष बाद राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 सामने आई। इसने एक दूसरी रिपोर्ट – 'शिक्षा बिना बोझ के' – की ओर ध्यान खींचा और पाठ्यचर्या की रूपाकृति का कुछ नया परिप्रेक्ष्य पेश किया। इस प्रयास का औचित्य निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया गया:

> ''वर्ष 2005 में पाठ्यचर्या की रूपरेखा की समीक्षा के बावजूद पाठ्यचर्या के बोझ और परीक्षाओं की यंत्रणा के जटिल मुद्दे अनसुलझे ही रह गए। वर्तमान समीक्षा प्रयास में इस क्षेत्र के सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों किस्म के बदलावों का संज्ञान लिया गया है और इस शताब्दी के मोड़ पर स्कूली शिक्षा की भावी जरूरतों को पूरा करने की भी कोशिश की गई है। इस प्रयास में

शिक्षा के लक्ष्य, बच्चों के सामाजिक परिवेश, मानवीय विकास की प्रकृति और मनुष्य की अधिगम प्रक्रिया जैसे अनेक अंतर्संबंधित आयामों को भी ध्यान में रखा गया है।''

वर्तमान दस्तावेज में हम राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 का बारंबार हवाला देंगे। बहरहाल, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा में वर्णित अधिगम के परिप्रेक्ष्यों का सारांश इस अध्याय में अन्यत्र प्रस्तुत किया गया है।

पाठ्यचर्या की रूपरेखा, पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम - संक्षिप्त व्याख्या

अध्यापकों और शिक्षाविदों ने पाठ्यचर्या शब्द की भिन्न-भिन्न व्याख्याएं दी हैं जो उसके प्रयोग के खास संदर्भों और व्याख्याकार की अपनी पृष्ठभूमि पर निर्भर करती हैं। कुछ लोग इसकी परिभाषा सीखने की विषयवस्तु के संकीर्ण अर्थ में करते हैं जबकि अनेक लोग इसका बहुत व्यापक अर्थ लगाते हैं।

कुगेलमास कहते हैं कि–

''पाठ्यचर्या के दायरे में हर वह चीज आती है जिसे बच्चा स्कूल के अंदर सीखता है। इसमें पाठ्यचर्येत्तर क्रियाकलाप तथा सामाजिक और वैयक्तिक रिश्ते भी शामिल हैं। (पाठ्यचर्या की) परिभाषा को विस्तारित कर इसमें कथित 'प्रच्छन्न पाठ्यचर्या' अथवा विद्यार्थियों को मानकों, मूल्यों और प्रवर्तियों... का अव्यक्त शिक्षण भी समाविष्ट कर लिया गया है...''

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के संदर्भ में गठित 'पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों के लिए राष्ट्रीय फोकस ग्रुप' ने अपने स्थितिपत्र में पाठ्यचर्या की निम्नलिखित परिभाषा दी है :

पाठ्यचर्या का सर्वोतम अर्थ शायद योजनाबद्ध गतिविधियों का ऐसा समुच्चय है जिसे पाठ्य की विशेषवस्तु तथा सुविचारित ढंग से पोषित किए जाने वाले ज्ञान, कौशल और अभिवृतियों के साथ-साथ विषयवस्तु के चयन के लिए सिद्धांत वक्तव्य और पद्धतियों, सामग्री तथा मूल्यांकन के चयन के अर्थों में एक खास शैक्षिक लक्ष्य–लक्ष्यों के समुच्चय– को क्रियान्वित करने के लिए बनाया जाता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा या राज्य पाठ्यचर्या की रूपरेखा के संदर्भ में एक ओर पाठ्यचर्या की रूपरेखा और पाठ्यचर्या के बीच तथा दूसरी ओर पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम

के बीच स्पष्ट फर्क करना जरूरी है। वस्तुतः राष्ट्रीय या राज्य स्तर पर सिर्फ रूपरेखा बनाना ही संभव है जबकि वास्तविक पाठ्यचर्या सचेतन या अचेतन रूप से, खास विद्यालय के विशिष्ट संदर्भ में ही आकार ग्रहण करती है। पाठ्यचर्या रुपरेखा में पाठ्यचर्या बीजक की परिभाषा के साथ-साथ उसकी बुनियादी अवधारणाएँ, दर्शन और मूल मान्यताएं शामिल रह सकती हैं। पाठ्यचर्या के बीजक शिक्षा के लक्ष्यों और उद्देश्यों से शुरू करते हुए शिक्षण- अधिगम की विषयवस्तु और पद्धतियों तक पहुंचता है और अंततः मूल्यांकन सिद्धांत या तकनीकों तक विस्तारित हो जाता है। हालांकि शैक्षिक गतिविधियों की योजना, जो वास्तव में पाठ्यचर्या ही होती है, विद्यालय की अपनी अवस्थिति में ही ठोस शक्ल अख्तियार कर सकती है। राज्य पाठ्यचर्या की रूपरेखा विद्यालयों में वास्तविक पाठ्यचर्या निर्माण के लिए पाठ्यपुस्तकें और सार्वजनिक परीक्षा प्रणाली जैसे शिक्षा के कतिपय अवयवों, जिन्हें केन्द्रीय रूप से निर्मित भी करना पड़ सकता है, पर ध्यान देने के अलावा व्यापक दिशानिर्देश और संभव हुआ तो उसके लिए उपकरण भी मुहैय्या कर सकती है। तथापि, जब कोई रूपरेखा बनाई जाए तो उसे सुस्पष्ट, पूर्ण और सांगोपांग होना चाहिए। न तो उसे अत्यधिक आदेशात्मक होना चाहिए, न व्याख्या तथा क्रियान्वयन के लिहाज से अस्पष्ट और कठिन। इसमें विद्यालय स्तर की विविधताओं से जुड़ने लायक लचीलापन रहना चाहिए और इसे अध्यापकों व अन्य संबंधित समूहों/अभिकर्ताओं की तैयारी के लिए रणनीतियाँ भी मुहैया करानी चाहिए।

समूहों/अभिकर्ताओं में पाठ्यपुस्तकों की तैयारी या सार्वजनिक परीक्षाओं के संचालन के कार्यभार में संलग्न लोगों को शामिल होना चाहिए।

कभी-कभी 'पाठ्यक्रम' शब्द का प्रयोग सीमित ढंग से, 'पाठ्यचर्या' के अर्थ में कर दिया जाता है। वास्तव में यह अपेक्षाकृत संकीर्ण शब्द है जिसका आशय है शिक्षण की विषयवस्तु का विशिष्ट आलेखन जो पाठ्यक्रम या परीक्षा की अवधि जैसे सावधिक मूल्यांकन तंत्र से जुड़ा होता है। पाठ्यचर्या अधिक अमूर्त श्रेणी है जबकि पाठ्यक्रम पाठ्यपुस्तकों के रूप में ठोस आकार ग्रहण कर लेता है।

वर्ष 2004 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने पर्यावरण शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या तैयार की थी। इसके निम्नांकित पांच अवयव थे :

1. अपेक्षित अधिगम परिणाम
2. विषयवस्तु

3. उदाहरणीय गतिविधियां
4. शिक्षण-अधिगम रणनीतियां
5. मूल्यांकन

सामान्यत: पाठ्यचर्या का अर्थ होता है सीखने-सिखाने के तमाम अवसरों एवं अनुभवों का क्रमबद्ध संयोजन। पाठ्यचर्या शिक्षा के उद्देश्य को सीखने-सिखाने की सारी बातों एवं तरीकों से जोड़ती है। पाठ्यचर्या में विभिन्न प्रकार के ज्ञानों और कुशलताओं का समागम होता है, जो बालक के दृष्टिकोण के साथ-साथ दार्शनिक एवं शिक्षाशास्त्री दृष्टिकोण से आवश्यक होता है।

इसलिए पाठ्यचर्या की व्यापक रूपरेखा में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के उपरिलिखित पांच अवयवों के साथ निम्न अवयवों का होना भी अपेक्षित है :

1. संरचना एवं सहयोगी संस्थाएँ
2. प्रशासनिक ढांचा
3. पाठ्यपुस्तक एवं अन्य शिक्षण अधिगम सामग्री

अंतत: पाठ्यचर्या एक व्यापक अवधारणा है जिसके अंतर्गत बालक के उन समस्त अनुभवों का उपयोग आता है जिन्हें वह स्कूल के अंदर या बाहर प्राप्त करता है और जिसके द्वारा उसके व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास होता है।

विषयवस्तु अथवा पाठ्यक्रम पाठ्यचर्या में शामिल अनेक चीजों में से एक है, तो निस्संदेह काफी महत्वपूर्ण लेकिन सिर्फ पाठ्यक्रम के लिए चिंता शिक्षा के संपूर्ण उद्देश्य या शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के महत्व को नजरों से ओझल कर देती है।

1.3 बिहार के लिए पृथक पाठ्यचर्या क्यों?

बिहार में पाठ्यक्रम का निर्माण और संशोधन तो समय-समय पर होता रहा है, लेकिन अतीत में अपनी खुद की पाठ्यचर्चा बनाने पर भी गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया गया। यहाँ तक कि बुनियादी शिक्षा के संदर्भ में भी, जो चंपारण में गाँधी जी के शैक्षिक प्रयोग के विचार की उत्पति के समय से ही बिहार में अत्यंत जीवंत रहा था, शिक्षाशास्त्रीय बहसें पाठ्यचर्या निर्माण के प्रयास से असम्पृक्त बनी रही। बहरहाल यह गौरतलब है कि बुनियादी शिक्षा की प्रणाली में अत्यंत विशिष्ट और सुविचारित पाठ्यचर्या रणनीति समाविष्ट 2005 के बारे में व्यापक सलाह-मशविरों और बहसों के बाद, अब बिहार में अपनी खुद की पाठ्यचर्या बनाने की जरूरत महसूस हुई है।

बहरहाल, यहाँ इस आवश्यकता के पीछे मौजूद मूल कारणों को बताना उचित होगा, खास कर तब, जब राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने एक बड़े प्रयास के बाद पाठ्यचर्या के बारे में काफी ज्ञानवर्धक दस्तावेज तैयार किया है। ज्ञातव्य है कि इस कार्यभार के लिए 21 राष्ट्रीय संचालन समिति के अतिरिक्त विभिन्न विषयों के और भी कई विशेषज्ञ शामिल थे।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारणों में एक है पाठ्यसंदर्भ की प्रासंगिकता का मुद्दा। बिहार अपनी सांस्कृतिक विविधता के अर्थ में भारत का एक छोटा प्रतिरूप प्रतीत हो सकता है, फिर भी इसकी पाठ्यचर्या में यहाँ की सांस्कृतिक विशिष्टता अवश्य प्रतिबिंबित होनी चाहिए। ज्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि इस राज्य में शहरीकरण का स्तर मात्र 10.47 प्रतिशत है (2001 की जनगणना) जो राष्ट्रीय औसत 27.78 प्रतिशत से काफी नीचे है और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 जैसा दस्तावेज शहरी मध्यवर्गी बच्चों को ध्यान में रखकर बनाया गया प्रतीत होता है। सबसे बड़ी शहरी आबादी होने के बावजूद राजधानी पटना अभी तक महानगरों में शुमार नहीं हो पाया है। छोटे शहरों के बारे में तो कहना ही क्या, जिसका चरित्र ग्रामीण से ज्यादा अलग नहीं बन सका है। आज जिन बच्चों को विद्यालयों के दायरे में लाने की कोशिश की जा रही है, उनमें बड़ी तादाद में पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी हैं। विद्यालयों में अधिसंरचनात्मक सुविधाओं का स्तर समान्यतया अत्यंत निम्न है, जो अध्यापकों की दीर्घकालिक किल्लत के चलते और नीचे गिर गया है। इसके अलावा, बिहार की अन्य दूसरी समस्याएं भी हैं, जैसे– उत्तर बिहार में बाढ़ की विभीषिका तथा बिहार के अनेक हिस्सों, खास कर दक्षिण बिहार में हिंसा और अंत:संघर्ष, जो सामाजिक जीवन की लाक्षणिकता बन गए हैं। समाज का सामंती चरित्र भिन्न किस्म की शिक्षाशास्त्रीय चुनौती खड़ी करने में रोड़े अटका रहा है। कुल मिलाकर, बिहार में पाठ्यचर्या निर्माताओं के समक्ष मौजूद चुनौतियाँ अनेक रूपों में अनूठी और जटिल हैं, इसलिए वे बिल्कुल केंद्रित प्रयास की मांग करती हैं। बहरहाल, राज्य के लिए पाठ्यचर्या निर्माण के उसूल सूत्रबद्ध करने से पहले राज्य के सामाजिक, आर्थिक व शैक्षिक परिदृश्य पर गहरी दृष्टि डाल लेना आवश्यक होगा।

बिहार परिदृश्य और संभावनाएं

बिहार को देश का सबसे पिछड़ा राज्य माना जाता है। शिक्षा समेत मानवीय विकास के लगभग तमाम सूचकों के लिहाज से यह सबसे निचले पायदान पर खड़ा है। आजादी के समय बिहार में साक्षरता की दर राष्ट्रीय औसत 18.2 प्रतिशत के मुकाबले 16.7 प्रतिशत

थी। 2001 की जनगणना के मुताबिक जहाँ देश में साक्षरता की दर 65.38 प्रतिशत हो गई, वहीं बिहार में वह 47.53 प्रतिशत तक पहुंच सकी। 2001 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र के बाद तीसरा सबसे बड़ी आबादी (लगभग 8.29 करोड़) वाला राज्य है। यहाँ का समाज प्रधानत: खेतिहर है। इसकी 89 प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है, जहाँ निरक्षरता, गरीबी और बेरोजगारी चतुर्दिक पसरी हुई है।

सातवें अखिल भारतीय शिक्षा सर्वेक्षण (2002) के अनुसार, राज्य में स्कूल जाने वाली उम्र (6–14 वर्ष) के बच्चों की संख्या 204.48 लाख पाई गई जिसमें लड़के 108.36 लाख और लड़कियां 96.12 लाख थीं।

वर्ष 2002 में बिहार में 6–11 वर्ष की उम्र के 130.88 लाख बच्चे थे, जिनमें 62.07 लाख लड़कियां थीं। इतनी बड़ी आबादी, जिसे प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ना चाहिए था, इस राज्य में समस्या की विशालता की सूचक है। इसमें ग्रामीण बच्चों की तादाद लगभग 90 प्रतिशत थी और नीति–निर्माताओं को इस पहलू पर भी ध्यान देना पड़ेगा।

1993 और 2002 के बीच बिहार में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में 10.42 प्रतिशत की वृद्धि 12.91 प्रतिशत दर्ज हुई। किंतु उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में 1.2 प्रतिशत की क्षीण वृद्धि राष्ट्रीय स्तर पर 50.6 प्रतिशत वृद्धि के साथ चरम विरोधाभास प्रदिर्शित करती है। यह दिखलाती है कि जहाँ प्राथमिक स्तर पर शिक्षा के सर्वव्यापीकरण से प्रारंभिक स्तर पर सर्वव्यापीकरण की दिशा में बढ़ने के प्रयास राष्ट्रीय स्तर पर जारी हैं, वहीं बिहार में प्राथमिक स्तर से आगे जाने का प्रयास किया जाना अभी भी बाकी है। सातवें शैक्षिक सर्वेक्षण के अनुसार 30 सितंबर 2002 तक प्राथमिक विद्यालय 40,511 और उच्च प्राथमिक विद्यालय 9,733 थे। यह बताना जाना जरूरी है कि ये आंकड़े सिर्फ सरकारी विद्यालयों से संबंधित हैं। निजी विद्यालय बिहार भर में फैले हुए हैं और इन विद्यालयों की वृद्धि के बारे में लेखा–जोखा रखना मुश्किल काम है। प्राथमिक विद्यालयों की बहुत बड़ी संख्या (93.96 प्रतिशत) ग्रामीण इलाकों में अवस्थित है। किंतु, ग्रामीण इलाकों में इतनी भारी तादाद में विद्यालयों की मौजूदगी के बावजूद उनमें बच्चों के जाने और टिके रहने की स्थिति में कोई सुधार नहीं हो सका है। बिहार में छीजन दर राष्ट्रीय औसत से काफी ऊँची है। यहाँ के प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालयों में सकल नामांकन अनुपात क्रमश: 73.52 प्रतिशत और 24.98 प्रतिशत है (2002–2003), जबकि राष्ट्रीय स्तर पर यह अनुपात क्रमश: 95.39 प्रतिशत और 60.99 प्रतिशत था। प्राथमिक

विद्यालयों में अधिसंरचनात्मक सुविधाएं बच्चों के नामांकन और उनके टिके रहने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण कारक हैं। इनमें विद्यालय भवन, मनोरंजन के साधन और बुनियादी सुविधाएं शामिल हैं। यह विडंबना है कि सातवें अखिल भारतीय शैक्षिक सर्वेक्षण के अनुसार बिहार में अभी भी 2,500 से ज्यादा प्राथमिक विद्यालय खुले आकाश तले और तंबुओं में चल रहे हैं। सिर्फ 62 प्रतिशत विद्यालयों में कक्षा के निर्बाध संचालन के लिए उपयुक्त पक्के भवन मौजूद हैं। इस मामले में राष्ट्रीय आंकड़ा भी महज 65 प्रतिशत है, जो किसी भी तरह प्रभावशाली नहीं है।

यह हर्ष का विषय है कि हाल में बिहार में कई नई पहल हुई हैं और शिक्षा का परिदृश्य बदलने लगा है। नये विद्यालय खुल रहे हैं, बड़े पैमाने पर शिक्षकों की बहाली हुई है और विद्यालयों की आधारभूत संरचना में भी सुधार हो रहा है। फरवरी 2006 में शिक्षा पर एक विशेषज्ञ समिति का गठन हुआ जिसने स्कूली शिक्षा में सुधार के लिए कई अनुशंसाएँ, जिनमें सामान्य स्कूल प्रणाली की सिफारिश भी शामिल है।

बिहार में शिक्षा का सामाजिक संदर्भ

आजकल प्रचलित आर्थिक विकास के लगभग तमाम प्रमुख मापदंडों के आधार पर बिहार को पिछड़ा राज्य माना जाता है, तथापि इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि वृद्धि और विकास की यहाँ जबर्दस्त संभावना मौजूद है। राज्य के अनेक समाज विज्ञानियों के लिए इसकी व्याख्या करना आसान नहीं होगा कि देश के अर्थतंत्र और बेहतरी के लिए बिहार कितने अप्रत्यक्ष तरीकों से योगदान कर रहा है। बिहार के लोग विभिन्न क्षेत्रों और देशों में उत्कृष्ट प्रदर्शन कर रहे हैं, पर अपनी धरती पर ही कुछ चूक रह जा रही है जिसको जांचने और सुधारने की जरूरत है। शिक्षा इस स्थिति को ठीक करने का सबसे तर्कसंगत उपाय साबित हो सकती है।

बिहार में शिक्षा के समकालीन सदंर्भ को निम्नलिखित तरीके से श्रृंखलाबद्ध करना उपयोगी हो सकता हैं–

(i) बिहार में अभी भी सामाजिक सोच पर जाति आधारित श्रेणीक्रम की गहरी पकड़ है जो जीवन और समाज के तमाम पहलुओं को प्रभावित करती है, तथा समानता और स्वतंत्रता के मूल्य के आड़े आता है।

(ii) ऐसी समाज–व्यवस्था में शैक्षिक संस्थाओं का भी श्रेणीक्रम उभरा है जो विद्दमान असमानताओं को जारी रखने में ही सहायक है। गरीब तबकों की शामिल

करने वाली राज्य संपोषित संस्थाओं की स्थिति जर्जर है।

(iii) बिहार में गरीबी और आर्थिक पिछड़ापन का व्यापक विस्तार है जो अनसुलझे सामाजिक तनाव और उबलते विक्षोभ की ओर अग्रसर है, खास कर ग्रामांचलों में, जहां अभी भी नब्बे फीसदी आबादी रहती है।

(iv) विरोध, अव्यवस्था और अवज्ञा अपने-आप में मूल्य से बन चुके हैं तथा व्यवस्थित और संतुलित सामाजिक रूपांतरण की राह में अवरोध पैदा कर रहे हैं।

(v) दूसरी तरफ, देश वैश्वीकरण और प्रौद्योगिकीय परिवर्तन के युग में प्रवेश कर रहा है और प्रारंभिक शिक्षा वादा से मांग की ओर बढ़ते हुए संपूर्ण मौलिक अधिकार के रूप में विकसित हो गई है।

उपर्युक्त स्थिति उथल-पुथल भरे समाज की द्योतक है जहां तुरन्त सामाजिक हस्तक्षेप अत्यावश्यक है और इसीलिए राज्य के लिए पाठ्यचर्या बनाते समय इन कारकों को नजर में रखना जरूरी है। सौभाग्यवश, राज्य में प्रचुर सांस्कृतिक एवं राजनीतिक संसाधन उपलब्ध हैं जिनका इस्तेमाल इसको मौजूदा दलदल से निकलने के लिए किया जा सकता है। उत्तर बिहार के पूर्वी हिस्से में जहां अति समृद्ध मिथिला संस्कृति विद्दमान है वहीं पश्चिम की तरफ भोजपुरी भाषा और संस्कृति है और वैसी ही स्थिति भागलपुर के इर्दगिर्द के क्षेत्र की है जहां अंगिका बोलचाल की भाषा है। हर अंचल में कला की विभिन्न शैलियों का अपना समृद्ध भंडार है, संस्कृति व ऐतिहासिक पहचान का अपना बोध है। एक अर्थ में कहें तो सांस्कृतिक बहुलता के अपने खुद के संस्करण वाला बिहार भारत का एक छोटा प्रतिरूप है।

राजनीतिक चेतना के लिहाज से बिहार का समाज चौकस और सक्रिय है, हालांकि उसका ढंग हमेशा जिम्मेदाराना नहीं रहता। लोगों की ऊर्जा को दिशाबद्ध करने की जरूरत है और विद्यालय ऐसे प्रशिक्षण के लिए सबसे उपयुक्त स्थल साबित हो सकते हैं।

बिहार में स्कूली शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्य

मनुष्य के निजी व्यक्तित्व या संपूर्ण समाज को आकार देने में शिक्षा एक प्रभावकारी माध्यम है। यह सच है कि मनुष्य का व्यक्तित्व बहुतेरे कारकों से प्रभावित होता है जिसमें वह पारिवारिक और सामुदायिक वातावरण भी शामिल हैं, जिसमें बच्चा पलता-बढ़ता है तथा वे स्थितियां जिसके संसर्ग में वह आता है। इसके बावजूद अच्छी

संस्था मनुष्य के व्यक्तित्व पर अमिट छाप छोड़ती है और संस्थाएं व्यक्तित्व के विकास में सहायक हो सकती हैं और होती भी हैं। दूसरी ओर, किसी समाज के अधिकांश सदस्य अगर कुछ वर्षों के लिए स्कूली शिक्षा प्राप्त न करें तो वह समाज ऊँचाइयों पर नहीं जा सकते। अपनी व्यापक पहुंच के कारण विद्यालय आधुनिक युग में मूल्यों, खासकर नए मूल्यों (जैसे पर्यावरण के प्रति सौन्दर्यबोध, मानवाधिकार, अभिवंचित वर्गों की शिक्षा आदि) के सृजन और संप्रेषण के सबसे उपयुक्त स्थल बन गए हैं। निस्संदेह, एक प्रणाली के बगैर विद्यालय हमेशा के लिए प्रभावी नहीं भी हो सकते हैं और वर्तमान इलेक्ट्रॉनिक मीडिया जैसे अधिक प्रभावशाली स्रोतों से पीछे भी छूट सकते हैं। इन तमाम संभावित सीमाओं के बावजूद यह जरूरी है कि विद्यालयों के सम्मुख शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्य स्पष्ट रहें ताकि वे उपयुक्त उद्देश्य और दिशा से अपनी शैक्षिक गतिविधियां और कार्यक्रमों का निरूपण कर सकें।

प्रथमत: विद्यालय सीखने के स्थल हैं और इसीलिए विद्यालयों का उद्देश्य प्रेरणा देना और सीखने के अवसरों में अधिकतम वृद्धि करना होना चाहिए। इस तथ्य के साथ कि हम द्रुत परिवर्तन के कल में रह रहे हैं, बच्चों को विद्यालयों में ज्ञानार्जन की कला सीखनी चाहिए और सतत नवीन ज्ञान हासिल करने की भावना अपनानी चाहिए ताकि वे नई परिस्थतियों के अनुसार खुद को सृजनात्मक और लचीले ढंग से ढाल सकें। फिर, सीखने का मतलब महज कुछ तथ्यों और धारणाओं की जानकारी हासिल करना भर नहीं होता; इसका अभिप्राय– निर्माण की क्षमता का विकास होता है जो उसके चारों ओर की दुनिया को समझने में सहायक हो सके। साथ ही, विद्यालय बच्चों को जो चीजें सीखने के काबिल बनाना चाहता है, उसमें विविध कुशलताओं की प्राप्ति और वांछित मूल्यों का सृजन शामिल होना चाहिए। यद्यपि बालकेंद्रित अधिगम के विचार में यह बात निहित है कि बच्चों के बीच सीखने की गति और ढर्रे में फर्क हो सकता है लेकिन कुछ बुनियादी मूल्य और कौशल ऐसे हैं जिन्हें हर बच्चे को विद्यालय में रहते हुए देर-सवेर अवश्य सीखना चाहिए। उदहारणार्थ, खुद से सोचने-विचारने और व्यक्तिगत जिम्मेदारी के साथ आचरण करने में समर्थ होना हर बच्चे से अपेक्षित है। उसी प्रकार, कला का अनुसरण करने की सबकी क्षमता भिन्न-भिन्न हो सकती है, तथापि सौंदर्य और कला रूपों का विवेचन सृजित व्यक्तित्व की मौलिक विशेषता होनी चाहिए। हर बच्चे का सौंदर्यबोध विकसित करना चाहिए और उसे इस तरीके से सृजनात्मक बनाना चाहिए जो उसके व्यक्तित्व के अनुरूप हो। सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, साहस या आत्मविश्वास ऐसे गुण हैं

जिसकी हमेशा से कद्र की जाती रही है और आज की शिक्षा प्रणाली भी इनकी उपेक्षा करके नहीं चल सकती हैं।

शिक्षा का उद्देश्य एक व्यक्ति के बतौर बच्चे के व्यक्तित्व के विकास के साथ-साथ सामाजिक मूल्यों का संवर्धन भी होना चाहिए। भारतीय संविधान लोकतांत्रिक समाज का निर्माण करना चाहता है जिसमें हमारे परम्परागत समाज के कतिपय अन्यायपूर्ण/ भेदभावपूर्ण मूल्यों (जैसे– प्रलग-भेद, रुढ़िवाद, बालश्रम आदि) की जगह एक नई मूल्य प्रणाली कायम हो सके।

दुर्भाग्यवश, बिहार के समाज में इन अन्यायपूर्ण मूल्यों की मजबूत उपस्थिति बनी हुई है। संविधान सभी नागरिकों के लिए समान हैसीयत और अवसर की गारंटी करता है और इसलिए एक श्रेणीबद्ध समाज को समतामूलक सामाजिक व्यवस्था में बदलने के लिए शिक्षा को रूपांतरकारी भूमिका अदा करनी होगी। तब इसका मतलब होगा दलितों, महिलाओं या समाज के निर्धन तबकों के प्रति उचित सम्मान व्यक्त करना। संविधान की प्रस्तावना के अनुसार हम हर व्यक्ति के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक – हर तरह का न्याय सुनिश्चित करने के प्रति संकल्पित हैं। इसी प्रकार, चिंतन और क्रियाकलाप की स्वतंत्रता तथा सबके बीच भाईचारे का विचार भी संविधान में प्रतिष्ठापित बुनियादी मूल्य हैं। धर्मनिरपेक्षता संविधान की एक अन्य मौलिक विशेषता है जिसका तात्पर्य है तमाम आस्थाओं के प्रति समान रूप से सम्मान और बच्चों को अपने स्कूली जीवन में यह अवश्य सीखना चाहिए। वस्तुत: बच्चों को अपने देश तथा राज्य की समृद्ध और विविध रूपात्मक संस्कृति के बारे में भी अवगत होना चाहिए और अपनी विविधता और बहुसांस्कृतिकता की समझ भी हासिल करनी चाहिए। तथापि, होना यह चाहिए कि विभिन्न विश्वास प्रणालियों और सांस्कृतिक विरासत के प्रति सम्मान और बच्चों को रुढ़िवाद की ओर अग्रसर न करे, बल्कि नई प्राथमिकताओं और उभरती जरूरतों के संदर्भ में उनके अंदर आलोचनात्मक पुनर्मूल्यांकन और पुर्नव्याख्या की गुंजाइश पैदा करे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952) द्वारा निरूपित लोकतंत्र की इस दृष्टि पर सही ध्यान दिया गया है :

> ''लोकतंत्र में नागरिकता अनेक बौद्धिक, सामाजिक तथा नैतिक गुणों का समावेश करती है... लोकतांत्रिक नागरिक में मिथ्या और सत्य के बीच, प्रचार और तथ्य के बीच विभेद करने तथा हठधर्मिता और पूर्वाग्रह के खतरनाक आकर्षण को ख़ारिज करने की समझ और बौद्धिक ईमानदारी होनी चाहिए...

पुराने को पुराना कहकर ख़ारिज नहीं करना चाहिए बल्कि विवेकपूर्ण ढंग से दोनों की जांच-परख करनी चाहिए और उन चीजों को साहसपूर्वक ठुकराना चाहिए जो न्याय और प्रगति की ताकतों को अवरोधित करती हैं...''

वास्तव में जिन मूल्यों का विकास विद्यालयों का लक्ष्य है, बाहरी दुनिया के उनके विरोधी प्रभावों से अगर हमारे विद्यालयों को होड़ लेना है, तो बच्चों को अपने ही समाज में मौजूद बुराई के खिलाफ भी साहस और धैर्य के साथ लड़ना सीखना पड़ेगा।

अब्राहम लिंकन द्वारा एक शिक्षक को लिखे पत्र की ये पंक्तिया यहाँ उल्लेखनीय हैं:

मैं जानता हूं, उसे सीखना होगा
कि हर आदमी न्यायपूर्ण नहीं है,
कि सब लोग सही भी नहीं हैं।
लेकिन उसे यह भी सिखाओ
कि हर शैतान के लिए एक नायक होता है
कि हर स्वार्थी राजनीतीज्ञ के लिए
होता है एक समर्पित रहनुमा...

बच्चों को अव्वल तो खुद अपने साथ और फिर प्रकृति व समाज के साथ सामंजस्य बनाकर रहना सीखना पड़ेगा। पर्यावरण क्षरण में हाल-फिलहाल हुई वृद्धि की स्थिति में प्रकृति के साथ सामंजस्य का बोध बच्चों को प्राकृतिक पर्यावरण के प्रति संवेदनशील और फलत: उसके संरक्षण के लिए तत्पर बनाएगा। इस प्रकार की शिक्षा बच्चे के अंदर टिकाऊ किस्म के मानव विकास का परिप्रेक्ष्य पैदा करेगा जो लोगों की बेहतरी के विचार का सामंजस्य प्रकृति के संरक्षण के साथ बिठाता है। दूसरी ओर, समाज में सामंजस्य का अनुसरण शांति और अहिंसा के विचार की ओर ले जाता है जो आज की कलह-जर्जर दुनिया में एक महत्वपूर्ण आदर्श है।

बहरहाल, बिहार के विशिष्ट संदर्भ में इसके ऊपर वर्णित सामाजिक संदर्भ के मद्देनजर व्यवस्थापूर्ण और समतामूलक समाज व्यवस्था का निर्माण सर्वप्रमुख चुनौती है और पाठ्यचर्या संबंधी रणनीति में इसका ख्याल रखा जाना चाहिए। इसका मुकाबला कैसे किया जाए, सामाजिक व सांस्कृतिक संसाधनों का सही इस्तेमाल कैसे हो सके और हमारे विद्यालयों के संदर्भ में शिक्षण-अधिगम रणनीतियाँ कैसे बनें– ये चंद महत्वपूर्ण सवाल हैं जिन पर पाठ्यक्रम निर्माताओं को अवश्य ध्यान देना होगा।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में अधिगम का परिप्रेक्ष्य

बच्चों की सीखने की क्रिया से जुड़े कुछ बुनियादी उसूल हैं जिनका पक्षपोषण आज के अनेक शिक्षाविद करते हैं। इनमें से कुछ के बारे में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में जोर देकर चर्चा की गई है और इस दस्तावेज में उन पर पुनः बात करना जरूरी है। बच्चों की सीखने की प्रक्रिया पर तो अन्यत्र बहस होगी, लेकिन यहाँ हम सीखने से संबंधित तीन महत्वपूर्ण विचारों का सारांश प्रस्तुत कर रहे हैं :

(क) बच्चा सक्रिय और स्वाभाविक शिक्षार्थी के रूप में

अब यह सर्वसम्मत विचार है कि हर बच्चे में सीखने की स्वाभाविक उत्कंठा और क्षमता होती है जो लगभग स्वतः भाषा सीखने के उसके ढंग में सबसे पहले उजागर होती है। बालकेंद्रित शिक्षाशास्त्र के विचार का मतलब है बच्चों के अनुभवों का कोई महत्व नहीं होता क्योंकि वहां अध्यापकों को जानने योग्य समस्त ज्ञान का भंडार माना जाता है। वहां अनुशासन व आज्ञा पालन के नाम पर बच्चों की आवाज दबा दी जाती है और उन्हें निष्क्रिय शिक्षार्थी बना दिया जाता है। यह स्थिति पूरी तरह बदलनी चाहिए। हर बच्चे की पारिवारिक और सामाजिक पृष्ठभूमि होती है तथा सीखने का एक अपरिहार्य सामाजिक चरित्र होता है। इसलिए बच्चे के अंदर जो कुछ है और जो कुछ लेकर वो विद्यालय आता है, उसकी कद्र की जानी चाहिए। विद्यालयों को चाहिए कि वे सीखने की प्रक्रिया में बच्चों की सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करें। अपनी उत्सुकता के पोषण के लिए उन्हें खुद से अभ्यास करना चाहिए, सवाल पूछना चाहिए और जांच-पड़ताल में उतरना चाहिए।

(ख) सीखना ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया के रूप में

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) द्वारा ग्रहित निर्माणवादी परिप्रेक्ष्य में 'अधिगम ज्ञान निर्माण की एक प्रक्रिया है। शिक्षार्थी उन्हें दी गई सामग्री/गतिविधियों (अनुभव) के आधार पर विद्यमान विचारों के साथ नए विचारों को जोड़ने के जरिए अपना खुद का ज्ञान सक्रियतापूर्वक निर्मित करता है। सीखने की प्रक्रिया में शिक्षार्थी जैसे-जैसे आगे बढ़ता है, रचना और पुनर्रचना के विचार उनकी मूलभूत विशेषता बन जाते हैं। बहरहाल, यहाँ इस अर्थ में सामाजिक पहलू भी संलग्न है कि किसी जटिल काम के लिए आवश्यक ज्ञान समूह की स्थिति में ही प्राप्त हो सकता है। इसलिए, इसमें सहयोगात्मक अधिगम और तात्पर्यों की सामाजिक निर्माण के लिए भी गुंजाइश रहती है।

बच्चा जिस ज्ञान के निर्माण में संलग्न हो सकता है, एक अच्छा शिक्षक उसकी प्रक्रिया को सहयोग देता व सुगम बनता है। बच्चों को सवाल पूछने की अनुमति देने, अपने शब्दों में अपने अनुभवों के आधार पर उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित करने तथा भलीभांति चुने गए चुनौतीपूर्ण कार्यों व प्रश्नों में उन्हें लगाने से उनकी समझदारी के विकास में मदद मिलेगी। दूसरी ओर, महज किताबों में लिखे या अध्यापकों द्वारा कहे शब्दों में सिर्फ सवालों का जवाब देने तक उन्हें सीमित कर देना तथा उन्हें जो कुछ पढ़ाया गया है, उसे सिर्फ याद करने और फिर प्रस्तुत करने की अपेक्षा करना उचित समझदारी के साथ सीखने की प्रक्रिया को रोकने के ही पक्के रास्ते हैं।

(ग) अंत:क्रिया और वार्तालाप द्वारा अधिगम आलोचनात्मक शिक्षाशास्त्र की ओर अग्रसर कदम

'सीखने की प्रक्रिया कर्रवाई और भाषा, दोनों माध्यमों से अपने चारों ओर के पर्यावरण, प्रकृति, वस्तुओं और लोगों के साथ परस्पर-क्रिया के जरिए संपन्न होती है। खुद से, अपने बराबरी वालों के साथ या बड़े लोगों की उपस्थिति में घूमने-फिरने, खोजने-ढूंढने और कुछ करने जैसी शारीरिक गतिविधि तथा भाषा का प्रयोग (जैसे– पढ़ना, बोलना या पूछना, सुनना और वार्ता करना) ही वे मुख्य प्रक्रियाएं हैं जिनके जरिए सीखने की क्रिया आगे बढ़ती है। 'अध्यापकों की ओर से एकतरफा संप्रेषण के बजाय वार्तालाप बच्चों को हिस्सेदार बनाएगा और उन्हें सोचने व अभिव्यक्त करने के लिए प्रेरित करेगा। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में दृढ़तापूर्वक कहा गया है कि 'आलोचनात्मक शिक्षाशास्त्र (विभिन्न) मुद्दों पर उनके राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व नैतिक पहलुओं के अर्थ में आलोचनात्मक ढंग से चिंतन करने का अवसर प्रदान करता है... आलोचनात्मक शिक्षाशास्त्र खुली बहसों और बहुविध दृष्टिकोणों को प्रोत्साहित करने व मान्यता देने के जरिए सामूहिक निर्णय की प्रक्रिया को सुगम बनाता है।'

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में अधिगम संबंधी उपर्युक्त तीन प्रमुख विचारों पर जोर दिया गया है। यदि उन्हें ध्यान में रखा जाए तो अध्यापकों और विद्यालयों की भूमिका को ठीक-ठीक निर्धारित किया जा सकता है और हमारे बच्चों के लिए बेहतर गुणवत्ता की शिक्षा सुनिश्चित की जा सकती है।

मार्गनिर्देशक सिद्धांत और दर्शन

बिहार में कुछ खास किस्म की समस्याएँ अथवा विशिष्ट संभावनाएँ भले ही हों मगर यहाँ की स्थिति राष्ट्रीय शैक्षिक परिदृश्य के साथ काफी कुछ मिलती-जुलती भी है इसलिए दूसरी जगहों पर, विशेषत: राष्ट्रीय बहसों के क्रम में हासिल अनुभवों और अंतर्दृष्टि से हमें सबक लेना चाहिए। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में हमारी स्कूल प्रणाली की परिवर्तनरोधी अनम्यता अथवा बच्चों की जिंदगी से असंपृक्त अलग-थलग गतिविधि के बतौर चलने वाली अधिगम प्रक्रिया का उल्लेख सही ही किया गया है। हमारी शिक्षा प्रणाली हमारे संविधान प्रतिष्ठापित मूल्यों के संवर्धन में नाकाम रही है और उसने बच्चों पर अनुचित बोझ डाला है। इस दस्तावेज में वर्णित ऐसे तमाम मुद्दे बिहार के संदर्भ में महत्वपूर्ण हैं, फिर भी शिक्षा के उद्देश्य या पाठ्यचर्या निर्माण के लिए मार्गनिर्देशक सिद्धांत तय करते समय अथवा दिशा के पुनर्निर्धारण के लिए रणनीतियाँ बनाते वक्त इस राज्य के विशिष्ट संदर्भ को केंद्र में अवश्य रखना पड़ेगा। बिहार में शिक्षा के उद्देश्य का जिक्र ऊपर किया गया है। रणनीतियों के बारे में सुझाव इस दस्तावेज़ के मुख्य भाग में दिखाया जाएगा। राज्य की पाठ्यचर्या के लिए मार्गनिर्देशक सिद्धांत नीचे दिए जा रहे हैं जो कुछ जगहों पर हल्के-फुल्के संशोधनों के साथ राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) से सीधे तौर पर लिए गए हैं–

(I) शिक्षा को प्रकृति, समाज तथा विद्यालयों के बाहर की ज़िंदगी के साथ जोड़ना।

(II) निर्माणकारी आलोचनात्मक दृष्टिकोण के विकास हेतु पाठ्यपुस्तकों और शिक्षा-अधिगम रणनीतियों की पुनर्रचना करना।

(III) सीखने की प्रक्रिया में मदद पहुचाने के लिए वर्गकक्षों और परीक्षाओं के बारे में नए तरीके से सोचना।

(IV) चौतरफा विकास तथा अपनी वैयक्तिक क्षमता को पहचानने में बच्चों की मदद करना।

(V) सामाजिक सरोकारों से युक्त शिक्षित, सक्षम और कर्तव्यनिष्ठ नागरिक के बतौर विकसित होने के उदेश्य को ध्यान में रखकर बच्चों का पालन पोषण करना।

मार्गनिर्देशक उसूलों के उल्लेख में यहाँ जो शब्दावली प्रयुक्त हुई है वह राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) की तुलना में यहाँ-वहाँ थोड़ी भिन्न है। बिहार, जहाँ के अधिकतर लोग गाँव में रहते हैं, का समाज अभी भी अपेक्षाकृत ज्यादा परंपरावादी है। अपने

सकारात्मक-नकारात्मक तात्पर्यों सहित यहाँ के सामाजिक मानक और बंधन ज्यादा शक्तिशाली हैं और अधिसंख्य बच्चों की ज़िंदगी प्रकृति के करीब है। समाज की शक्ति को संरक्षित-संवर्धित करने की जरूरत तो है, मगर नकारात्मकता का मुकाबला करने के लिए हस्तक्षेप भी उतना ही जरूरी है। विद्यालयों का प्रबंधन हो या पाठ्यसामाग्री की तैयारी या फिर पाठ्यक्रम का निर्माण-हस्तक्षेप के तरीके सावधानीपूर्वक निर्धारित करने होंगे। बच्चों को प्रकृति के साथ अंत:क्रिया में जाना चाहिए और समाज में लोगों के साथ संबंध बनाने चाहिए, मगर सामंजस्य का विचार प्रकृति और समाज के साथ संबंध बनाने के मामलों में अलग-अलग अर्थ ग्रहण कर लेंगे। जहाँ प्रकृति का सम्मान और संरक्षण आवश्यक है, वहीं बच्चों के लिए उन सामाजिक आचारों के प्रति अधिक आलोचनात्मक दृष्टि विकसित करनी जरूरी है जो संवैधानिक उसूलों के खिलाफ जाते हैं। मानव समाज मनुष्यों के द्वारा निर्मित हुआ है और मनुष्य ही इसकी गड़बड़ियों के लिए ज़िम्मेवार है जिन्हें मानवीय प्रयासों से सुधारने की आवश्यकता है। एक नई मूल्य प्रणाली कैसे विकसित की जाए, यह शिक्षाविदों के लिए एक मुकम्मल कार्यभार ही होगा। टकराव और विरोध के इस वातावरण में आलोचनात्मक दृष्टिकोण को सक्रिय और निर्माणकारी जुड़ाव की ओर यथार्थपरक ढंग से दिशा देना जरूरी है। पाठ्यपुस्तकों की रचना या शिक्षण-अधिगम रणनीतियों के चुनाव में पाठ्यपुस्तकों के लेखकों और अध्यापकों के समक्ष ये उसूल स्पष्ट रहने चाहिए।

समाज के सांस्कृतिक संसाधनों का भी इस्तेमाल करना पड़ेगा। ये कभी-कभी हमें क्रांतिकारी शिक्षाशास्त्र की ओर ले जा सकते हैं। कभी-कभी बच्चों के सामाजिक अधिगम में परिष्कार का तरीका क्रांतिकारी से कुछ नीचे दर्जे का हो सकता है, मगर राज्य में सामाजिक उथल-पुथल की वर्तमान स्थिति में यही वांछनीय है। ग्रामीण बच्चे की सामाजिक संलग्नता शहरी या महानगरीय बच्चे की अपेक्षा काफी ज्यादा हो सकती है, मगर हो सकता है वह संलग्नता सामाजिक चेतना और हमारे संविधान या प्रगतिशील कानूनों में, खासकर महिलाओं, बच्चों, विकलांगों या अन्य कमजोर समूहों के बारे में निहित सामाजिक सरोकारों से निर्देशित नहीं भी हो। उनके प्रत्युतर मानवीय होते हुए भी दुर्बलकारी होंगे, दयालु मगर अचेतन होंगे। बच्चों को कर्त्तव्यनिष्ठ नागरिक के रूप में विकसित होना चाहिए और उन्हें व्यक्तिवादी बने बगैर वैयक्तित्व क्षमता को पहचानना चाहिए। मेधावी और महत्वाकांक्षी बच्चों के साथ यह गंभीर समस्या हो सकती है जिनकी महत्वकांक्षा कभी-कभी माँ-बाप द्वारा आरोपित होती है कि वे अपने सामाजिक परिवेश

से ही अलग-थलग पड़ने लग जाते हैं। दूसरी ओर, अधिकांश बच्चे अपनी पढ़ाई जारी नहीं रख पाते या उदासीन भाव से पढ़ते रहते हैं और इस प्रकार अपनी सही क्षमता पहचानने में असफल हो जाते हैं। बच्चों को अपनी पढ़ाई पूरी करने, अपनी क्षमता बढ़ाते जाने तथा आत्मविश्वास हासिल करने में समर्थ बनाया जाना चाहिए, साथ ही उन्हें अपने लोगों और परिवेश से जुड़ा भी रहना चाहिए। यह वास्तव में एक बड़ी चुनौती है।

बहुतेरे बच्चों के घर में पाठ्यपुस्तकें ही एकमात्र उपलब्ध मुद्रित सामग्री होती है। परीक्षा की चुनौती उनके अधिगम के लिए मुख्य उत्प्रेरक होती है और परीक्षाओं में अच्छे नतीजे आधुनिक आर्थिक दुनिया में ऊपर उठने कि एकमात्र राह होते हैं। बहुत से बच्चे उन बहुतेरी चीजों के बारे में जानते तक नहीं जो शहरी मध्यवर्गीय बच्चों की ज़िंदगी में लगभग रोज़मर्रा की बातें होती हैं। अनेक बच्चों के लिए पाठ्यपुस्तकें, व्याकरण की किताबें और शब्दकोश अंग्रेज़ी जैसी दूसरी भाषा सीखने के प्राथमिक संसाधन होते हैं। ऐसे बच्चों की शिक्षा को व्यवस्थित करना आसान नहीं होता और अध्यापकों को उन्हें अतिरिक्त सहायता देनी पड़ेगी। निस्संदेह, बच्चों में सीखने की प्रचुर क्षमता होती हैं, किन्तु उनके उत्साह पर पानी फेरने वाले अनेक सामाजिक कारक भी यहाँ मौजूद हैं। उन्हें प्रोत्साहन देने, बहलाने-फुसलाने और उत्साहित करने की आवश्यकता हो सकती हैं। यदि पाठ्यपुस्तकों, वर्गकक्षों और परीक्षाओं के बंधनकारी त्रिकोण से बाहर निकलना वांछनीय है तो उनका पुनर्निर्माण और जीर्णोद्धार भी उतना ही आवश्यक है जिससे उनकी पारंपरिक पवित्रता का सर्वोत्तम उपयोग किया जा सके। सच बात तो यह है कि अपनी वर्षों की शिक्षा के दौरान कुछ दबाव झेलने के बावजूद बच्चों को परीक्षा का सामना करना सीखना होगा, क्योंकि अपने परवर्ती जीवन मे उन्हें अच्छी संस्था मे भर्ती होने जैसा अवसर प्राप्त करने या सरकारी बैंक अथवा बड़े व्यावसायिक कार्यालयों में कोई रोजगार हासिल करने के लिए अनेक जांच और परीक्षाओं से होकर गुजरना पड़ेगा। इससे इतर भी, हर आदमी को ज़िंदगी में अनगिनत चुनौतियों का मुक़ाबला करना पड़ता है और स्थिरचित्त होकर सच्चाई का सामना करना शिक्षा से अपेक्षित उपलब्धियों का एक हिस्सा है।

शिक्षण-अधिगम रणनीतियों के पुनर्निर्माण में नई कारगर रणनीतियों के बारे में तो सोचना ही चाहिए, किन्तु वर्तमान शिक्षा की जो शक्ति है उसे भी अवश्य बरकार रखना चाहिए। रट्टा मारकर सीखना समझदारी के बगैर सीखना होता है, फिर भी अगर कुछ पहाड़े याद करने के बाद उसका प्रयोग करना सिखाया जाए और इसकी गणितीय

बुनियाद तथा संभावित उपयोगिता की समझदारी विकसित की जाए तो यह उपयोगी तकनीक साबित होती है इसीलिए इसे दरकिनार करने की ज़रूरत नहीं है। एक बार में नहीं तो चरणबद्ध ढंग से ही सही, मूल बात यह है कि अधिगम का परिणाम ज्ञान और समझदारी को बढ़ाना होना चाहिए। काफी छोटे बच्चे के लिए समझदारी कि प्रकृति सरल होती है, लेकिन जैसे-जैसे वह बड़ा होता है वैसे-वैसे उसकी आलोचनात्मक समझदारी बढ़ाते जाना भी ज़रूरी हो जाता है।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

कौशल विकास के लिए मुक्त शिक्षा संसाधन
मुक्त विश्वविद्यालय का दृष्टिकोण

अशोक कुमार गाबा* एवं **पी. प्रकाश****

सारांश

कार्यबल का विकास किसी देश, विशेष रूप से विकासशील देशों के आर्थिक विकास के लिए प्रमुख मुद्दों में से एक है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, निरंतर प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से श्रमिकों के मौजूदा ज्ञान और कौशलों को अद्यतन बनाना आवश्यक है। यह कार्य जटिल लगता है क्योंकि अधिकांश कार्यबल असंगठित क्षेत्र में हैं। इसमें विभिन्न स्थानों पर स्थित लोगों का समावेश होता है और सरकार के लिए ऐसे बिखरे हुए कर्मचारियों को नियंत्रित करना मुश्किल होता है। इसके अलावा, उनमें से अधिकतर कम वेतन वाले हैं और उनके पास कोई सुरक्षित नौकरियां नहीं हैं। उदाहरण के लिए, भारत में असंगठित क्षेत्र में 464 मिलियन का अनुमानित कार्यबल है। औपचारिक प्रणाली के माध्यम से उद्योग की जरूरत के अनुसार अपने मौजूदा कौशल और दक्षताओं को बढ़ाने में यह मुश्किल है। ऐसे बड़े कर्मचारियों के लिए उच्च लागत वाले उपकरण और प्रयोगशाला सुविधा प्रदान करना उनके विकास में मुख्य बाधा है। प्रस्तुत आलेख मुक्त शिक्षा संसाधनों (ओपन एजुकेशन रिसोर्सेज) (ओ ई आर) का उपयोग कर व्यावसायिक और कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए वैकल्पिक रणनीति पर चर्चा करता है। कार्यक्रम की प्रमाणीकरण के लिए, लेखकों ने भारत के इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू) में विभिन्न पाठ्यक्रमों के अध्ययन करने वाले शिक्षार्थियों से ओ ई आर के उपयोग पर राय मांगी। अध्ययन के निष्कर्ष, कौशल विकास के लिए ओ ई आर के

*पूर्व में व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण विद्यालय, इग्नू, नई दिल्ली से संबद्ध
**एस.आर.एम विश्वविद्यालय, सोनीपत, हरियाणा ई-मेल: asprakash96@gmail.com

उपयोग पर महत्वपूर्ण परिणाम प्रकट करते हैं। आलेख मुक्त विश्वविद्यालय के लिए कौशल विकास का एक मॉडल पेश करता है।

परिचय

अध्यापन-अधिगम की प्रक्रिया में मुक्त शिक्षा संसाधनों (ओ ई आर) का उपयोग पिछले दशक से दुनिया भर के विद्वानों के बीच चर्चा का विषय बन गया है। विद्वानों ने शब्दावली, फायदे और सीमा के संदर्भ में इसके उपयोग पर तर्क दिया है। उन्होंने ओ ई आर को गैर-वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए उपयोगकर्ताओं के समुदाय द्वारा परामर्श और अनुकूलन के लिए 'प्रौद्योगिकी-सक्षम, शैक्षिक संसाधनों के खुले प्रावधान' के रूप में परिभाषित किया। बूचर (2011, पृ. 6) ने जोर दिया कि ओ ई आर खुली शिक्षा, संसाधन-आधारित शिक्षा और मुक्त प्रकाशन के समान नहीं है। यह नई तकनीक द्वारा सक्षमता प्रदान करता है जो विभिन्न मीडिया के उपयोग की अनुमति देता है। उनके अनुसार 'ओ ई आर विशेष रूप से शिक्षण और शिक्षण-सामग्री को संदर्भित करता है जिसे विद्वानों के लेखों के माध्यम से शैक्षिक अधिगम के लिए शामिल किया जा सकता है।' पेरिस ओईआर घोषणा (यूनेस्को, 2012) ने कहा कि ''ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज शब्द शिक्षण, सीखने और किसी भी माध्यम, डिजिटल या अन्यथा में शोध सामग्री, जो सार्वजनिक डोमेन में रहती है या एक खुले लाइसेंस के तहत जारी की गई है, जो बिना किसी सीमित प्रतिबंध (पृ.1) वाले लोगों द्वारा बिना लागत वाली पहुंच, उपयोग, अनुकूलन और पुनर्वितरण की अनुमति देती है।'' ओ ई आर पर विकिपीडिया लेख ने ओ ई आर की अवधारणा को 'मुक्त और दूरस्थ शिक्षा (ओ डी एल) प्रणाली में विकास से ओ ई आर आंदोलन के रूप में सारांशित किया और मुक्त ज्ञान, मुक्त स्रोत, शुल्क साझा करने और सहकर्मी सहयोग की संस्कृति के व्यापक संदर्भ में, जो 20वीं सदी में प्रकाश में आया है'।

अनुसंधान की समीक्षा

विद्वानों ने एक अलग संदर्भ में ओ ई आर के उपयोग पर विभिन्न शोध अध्ययन आयोजित किए हैं। वर्तमान अध्ययन के उद्देश्यों के लिए प्रासंगिक अनुसंधान समीक्षाओं का एक संक्षिप्त सारांश की जांच की गई है। कंवर (सं) (2010) ने ओ ई आर को विशेष रूप से विकासशील देशों में शिक्षा प्रणाली विकसित करने के लिए उपयोगी बताया, क्योंकि यह सामग्री विकास के लिए समय बचाता है, ज्ञान साझा करने में मदद करता है, शिक्षकों के

लिए क्षमता निर्माण संसाधन प्रदान करता है और सभी स्तरों पर शैक्षिक गुणवत्ता में सुधार करता है। विकासशील देशों में अधिकांश मुक्त विश्वविद्यालय (ओ यू) गुणवत्ता आश्वासन की समस्याओं का सामना कर रहे हैं। ओ ई आर का प्रभावी उपयोग इस समस्या का समाधान प्रदान कर सकता है। ओईआर का लाभ यह है कि यह राष्ट्रमंडल अधिगम (2011) द्वारा वर्णित सीखने की मुक्त प्रणाली के सभी सिद्धांतों और दर्शन को पूरा करता है। फैरो एवं अन्य (2015) ने पाया कि ओईआर के कार्यान्वयन से छात्रों के प्रदर्शन में सुधार हो सकता है।

मुक्त विश्वविद्यालयों/दूरस्थ शिक्षण संस्थानों की पाठ्यपुस्तक/स्वयं-शिक्षण मुद्रित सामग्री (एसएलएम) उच्च शिक्षा की कुल लागत के एक महत्वपूर्ण भाग के रूप में योगदान देती है। इस लागत का बोझ छात्रों, माता-पिता और उनके समर्थन करने वालों के कंधों पर पड़ता है। शोध इंगित करता है कि (एसएलएम) की औसत आवर्ती लागत कार्यक्रम के अनुसार भिन्न होती है। यह दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (गाबा (सं) 2011) की कुल संस्थागत लागत (आवर्ती) के 60 से 90 प्रतिशत तक है। इस प्रकार, ओईआर में एक महत्वपूर्ण राशि बचाने की क्षमता है। हिल्टन एवं अन्य (2014) ने कहा कि यदि '2011 की शरद ऋतु के प्रारंभ में होने वाले सेमेस्टर के दौरान कॉलेज में दाखिला लेने वाले अमेरिका के 20,994,113 छात्रों में से केवल पांच प्रतिशत ने ही अगर इन बचत का लाभ उठाया हो तो; तो कुल बचत लगभग एक अरब डॉलर प्रति वर्ष होगी'।

भारत में मुक्त विश्वविद्यालय (ओयू), एसएलएम की छपाई पर भारी मात्रा में पैसा खर्च कर रहे हैं; और यदि ओईआर अपनाया जाता है तो वही व्यय बचाया जा सकता है। यह रणनीति समय बचाने में मदद करेगी और जो पहले से मौजूद है, उसके अनावश्यक पुनरावृत्ति को खत्म कर देगी। इसके अलावा, यह कॉपीराइट समझौते और स्वीकृति की लागत को भी कम करेगा। इसलिए, ओ यू कार्यक्रम की इकाई लागत की तुलना में ओ ई आर का उपयोग करने के लागत लाभ/तुलनात्मक विश्लेषण के बारे में अध्ययन करना और भी आवश्यक हो जाता है । यूनिट लागत की गणना एस एल एम, परामर्श सत्र, व्यावहारिक सत्र, असाइनमेंट/परियोजनाओं आदि के मूल्यांकन आदि के मुद्रण और वितरण के संदर्भ में संस्थागत और छात्र दृष्टिकोण से की जा सकती है।

कुछ शोध अध्ययनों ने ओ ई आर के उपयोगों के बारे में तर्क दिया है और सीमित इंटरनेट कनेक्टिविटी, प्रत्येक शिक्षार्थी को इंटरनेट की पहुंच, और सामग्री की प्रासंगिकता और गुणवत्ता जैसे मुद्दों की ओर इशारा किया है। विद्वानों (लेसरकल, 2011) द्वारा भाषा,

संस्कृति और बुनियादी ढांचा जैसे मुद्दों को भी उठाया गया। कोबो (2013) ने स्थापित किया कि अंग्रेजी भाषा के अलावा समय के साथ स्पेनिश और पुर्तगाली भाषाओं में ऑनलाइन सामग्री बढ़ रही थी। अन्य भाषाओं में विशेष रूप से विकासशील देशों में ओईआर सामग्री की पहुंच पर अध्ययनों की अब तक रिपोर्ट नहीं मिली है। एलन और सीमान (2014) ने बताया कि संकाय की धारणा के अनुसार, ओ ई आर के अधिक व्यापक रूप से अपनाने के लिए सबसे महत्वपूर्ण बाधा यह थी कि सामग्री का पता लगाने और मूल्यांकन करने के लिए बहुत अधिक समय और प्रयासों की आवश्यकता थी। इसके अलावा, हाई स्पीड बैंडविड्थ वाले डिजिटल प्रौद्योगिकी की पहुंच शिक्षार्थियों के बीच एक उभरती हुई समस्या है। डॉन (2012) ने संकाय प्रोत्साहनों को भी उजागर किया है; दुनिया भर में उच्च शिक्षा संस्थानों में ओईआर का उपयोग करते समय व्यापार मॉडल और अभिगम्यता अन्य उभरती हुई समस्याएं हैं। डी लगान (2013) ने सुझाव दिया कि ओईआर के लिए व्यापार मॉडल एक संगठन की रणनीति के साथ सीधा होना चाहिए। ओ ई आर के उत्पादकों और गोद लेने वाले संकाय सदस्यों के पास उचित प्रोत्साहन होना चाहिए। गुणवत्ता मुद्दों (धनराजन, 2013, मिश्रा, 2013, पावलोवस्की, 2007 और विकीएड्यूकेटर, 2009) पर काफी पहले से ही लिखा गया है। विद्वानों ने तर्क दिया कि ओ ई आर की गुणवत्ता की परिभाषा व्यक्तिपरक और प्रासंगिक रूप से निर्भर है। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि शिक्षण और सीखने की गतिविधि में उपयोग किए जाने वाले ओईआर की गुणवत्ता का आकलन करने की ज़िम्मेदारी संस्थान, कार्यक्रम/पाठ्यक्रम समन्वयक और कार्यक्रम के वितरण के लिए जिम्मेदार व्यक्तिगत शिक्षकों के भीतर निहित होनी चाहिए।

संबंधित अध्ययनों की समीक्षा से पता चलता है कि शिक्षा व्यवस्था में ओईआर के उपयोग पर विद्वानों के बीच मिश्रित प्रतिक्रियाएं हैं। यह काफी संभव है कि एक व्यक्तिगत संस्था द्वारा अपनाई गई एक विशिष्ट ओ ई आर, दूसरों के लिए प्रासंगिक नहीं हो सकती है, भले ही इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जा सके। उदाहरण के लिए, www.oerafrica.org अफ्रीका में उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए स्थापित किया गया है। हाल ही में, दुनिया भर में मुक्त विश्वविद्यालयों ने कार्यक्रमों के वितरण के लिए ओ ई आर के उपयोग की शुरुआत की। मुक्त विश्वविद्यालय ओ ई आर के विकास में अपनी संस्थागत ओपन लर्न पहल (http://www.open.ac.uk/openlearn) के माध्यम से एक विश्व नेतृत्व के रूप में उभरकर सामने आई हैं। मुक्त अधिगम (ओपन लर्न) अपने

ओपन और मुफ्त ऑनलाइन संसाधनों के लिए मुक्त विश्वविद्यालय का वेब एक्सेस पॉइंट है। यह 2006 में स्थापित किया गया था और ओपन यूनिवर्सिटी (http://www.open.ac.uk/about/open openlearn) का एक एकीकृत हिस्सा बन गया है।

दुनिया के अधिकांश देश विभिन्न दृष्टिकोणों के माध्यम से इसका उपयोग करने की प्रक्रिया में हैं। मिसाल के तौर पर, मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (एम आई टी) ने एक मंच बनाया है – ओपन कोर्स वेयर (ओ सी डब्लू) जिसमें संकाय मुफ्त उपयोग के लिए अपने स्वयं के व्याख्यान नोट्स ऑनलाइन रख सकता है। राष्ट्रमंडल के छोटे राज्यों के लिए आभासी विश्वविद्यालय (वर्चुअल यूनिवर्सिटी) ने मुफ्त संलेखन वेब संसाधनों का उपयोग करके सहयोगी पाठ्यक्रम विकसित करने के लिए विभिन्न दृष्टिकोण अपनाए हैं। हालांकि, विकासशील देशों में इन संसाधनों का उपयोग चीन, भारत, जापान, वियतनाम और इंडोनेशिया को छोड़कर विकसित देशों की तुलना में धीमा है। फिलिपींस ओपन यूनिवर्सिटी ने कई दृष्टिकोण अपनाए। शोध के साक्ष्य बताते हैं कि व्यक्तियों की अलग-अलग शैक्षिक शैलियों और वरीयताएं होती हैं। यह अधिगम केंद्रित दृष्टिकोण की ओर रुख करता है। इसलिए, ओ ई आर उपयोगी होगा और प्रत्येक व्यक्ति के लिए सहायक होगा (रॉबर्ट एवं अन्य 2015)। कंवर (2015) ने 26 मार्च को पापुआ न्यू गिनी में आयोजित ओ ई आर कार्यशाला के दौरान कहा था कि:

> *''बुंदा कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, मलावी के छात्रों के पास संचार कौशल पर कोई पाठ्यपुस्तक नहीं थी और वे पूरी तरह से व्याख्यान पर निर्भर थे। अब उनके पास पाठ्यपुस्तक है, जिनमें से 75% वेब ओ ई आर पर आधारित हैं और स्थानीय रूप से प्रासंगिक गतिविधियों, उदाहरणों और असाइनमेंट के पूरक हैं। जोस विश्वविद्यालय नाईजीरिया में एक व्याख्याता ने इस पाठ्यपुस्तक की खोज की और इसे अपनाया, यह दक्षिण-दक्षिण सहयोग का एक मिशाल है।''*

कौशल विकास कार्यक्रमों के वितरण के लिए दुनिया भर में खुले विश्वविद्यालयों द्वारा उनके विचारों पर विश्लेषण किया जा सकता है। शोध ने आगे स्थापित किया कि ओ ई आर ओ डी एल प्रणाली के माध्यम से कौशल को बढ़ाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, अनुरुद्धिका एवं अन्य (2015) ने ओ ई आर आधारित ई-लर्निंग कोर्स के माध्यम से प्राप्त अधिगम के अनुभवों पर शिक्षक और छात्रों की धारणा की जांच की। अध्ययन में निष्कर्ष निकाला गया कि ऑनलाइन शिक्षण और ओ ई आर एकीकरण की समग्र वैश्विक प्रवृत्ति शिक्षक और छात्र अधिगम में वृद्धि और अंग्रेजी भाषा और कंप्यूटर उपयोग के

संबंध में कौशल विकसित करती है। यह स्थापित किया गया है कि ओ ई आर कौशल को बढ़ाने में सहायक है। यद्यपि इसके प्रभाव पर कई अध्ययनों की सूचना नहीं मिली है, फिर भी इसके महत्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

भारत में मुक्त शिक्षा संसाधन (ओ ई आर) की पहल

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (जी ओ आई) ने ओ ई आर से संबंधित विभिन्न योजनाएं भी शुरू की हैं। उनमें से एक प्रौद्योगिकी उन्नत शिक्षण (एन पी टी ई एल) पर राष्ट्रीय कार्यक्रम है जिसने बुनियादी विज्ञान और इंजीनियरिंग विज्ञान के क्षेत्रों में ओ ई आर की शुरूआत की है। यह परियोजना सात भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई आई टी), भारतीय विज्ञान संस्थान और देश भर के अन्य प्रमुख संस्थानों द्वारा की जा रही हैं। अन्य पहल– एकलव्य परियोजना आईआईटी बॉम्बे द्वारा शुरू की गई और आई आई टी केरल द्वारा ई-ग्रिड परियोजना प्रारंभ की गई। एकलव्य परियोजना में, सामग्री को विभिन्न भारतीय भाषाओं में विकसित किया गया था जो इंटरनेट पर प्रसारित किए गए थे। इसने मुक्त शैक्षिक संसाधन एनिमेशन भंडार स्रोत (ओ एस सी ए आर) विकसित किया था जो शिक्षण के लिए वेब-आधारित इंटरैक्टिव एनिमेशन प्रदान करता है। ओ एस सी ए आर छात्र विकासकर्ताओं के लिए प्रशिक्षकों से विचारों और मार्गदर्शन के आधार पर एनिमेशन बनाने के लिए एक मंच प्रदान करता है। दोनों परियोजनाओं को उद्योग द्वारा वित्त पोषित किया गया था (कुमार, 2009)। हाल ही में, मा.सं.वि. मंत्रालय, भारत सरकार ने आकांक्षी युवाओं के लिए स्टडी वेब ऑफ एक्टिव लर्निंग *(स्वयं)* नामक परियोजना शुरू की है। *स्वयं* सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (http://mhrd.gov.in/) का उपयोग करके ऑनलाइन पाठ्यक्रमों के लिए एक एकीकृत मंच और पोर्टल प्रदान करता है। लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा स्थापित एक शीर्ष निकाय उद्यमिता और लघु व्यवसाय विकास के लिए राष्ट्रीय संस्थान (एन आई आई एस बी यू डी), ने 10 नवंबर, 2014 और 6 जून, 2015 को कौशल विकास पाठ्यक्रम बनाने के लिए ओ ई आर का उपयोग करने पर कार्यशालाएं आयोजित कीं। इन मुक्त सामग्री का लाभ यह है कि कोई उपयोग, अनुकूलन और साझेदारी हेतु कानूनी रूप से और स्वतंत्र रूप से प्रतिलिपि बना सकता है।

मा.सं.वि.मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू) ने देश के मुक्त दूरस्थ अधिगम संस्थानों द्वारा विकसित डिजिटल लर्निंग संसाधनों को स्टोर, इंडेक्स, संरक्षित, वितरित और साझा करने के लिए 2005 के

दौरान एक ज्ञान भंडार के विकास की शुरूआत की, जिसे ई-ज्ञानकोश कहा जाता है। इग्नू की दूसरी पहल लचीला अधिगम थी। यह एक ओपन कोर्स पोर्टल था जिसमें कोई भी नि:शुल्क भागीदारी के लिए पाठ्यक्रम हेतु पंजीकृत कर सकता है और उन्हें खोज सकता है। वर्तमान में, नीतिगत कारणों से इन गतिविधियों की समीक्षा की जारी रही है।

पिछली पहलों के मूल्यांकन पर अध्ययनों की अब तक रिपोर्ट नहीं मिली है। लेकिन, यह देखा गया है कि शिक्षक और छात्र समुदाय ने ओ ई आर से ज्यादा ध्यान नहीं दिया है। यह ओ ई आर नीति नहीं होने के कारण हो सकता है और शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में पाठ्यचर्या ढांचे के साथ एकीकृत नहीं होने के कारण भी हो सकता है। भारत सरकार ने हाल ही में उच्च शिक्षा संस्थानों में एम.ओ.ओ.सी. के सामग्री विकास और कार्यान्वयन के लिए दिशानिर्देश जारी किए हैं।

कौशल विकास के लिए मुक्त शिक्षा संसाधन (ओ ई आर)

भारत के राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने देश के समग्र आर्थिक विकास में प्रमुख बाधा के रूप में कौशल की कमी की पहचान की है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (2009-10) के आंकड़ों से पता चलता है कि भारत में कुल रोजगार 465 मिलियन है (संगठित और असंगठित दोनों क्षेत्रों में)। कुल कार्यबल (465 मिलियन) में, 94 प्रतिशत (435 मिलियन) असंगठित क्षेत्र में हैं। अकेले कृषि क्षेत्र में कुल 246 मिलियन कर्मचारी हैं (www.mospi.nic.in) जो देश के सकल घरेलू उत्पाद का 50 प्रतिशत भाग है। असंगठित क्षेत्र में कम उत्पादकता है और आमतौर पर कम मजदूरी का भुगतान किया जाता है। असंगठित क्षेत्र में सभी को कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए नीति निर्माताओं के सामने एक बड़ी चुनौती है। अधिक संसाधन जैसे अधिक प्रयोगशाला/ कार्यशालाओं, मास्टर प्रशिक्षकों आदि और उनके मौजूदा कौशल को बढ़ाने और नए कौशल प्रदान करने के लिए धन की आवश्यकता है। मौजूदा औपचारिक प्रणाली और उपलब्ध बुनियादी ढांचे के माध्यम से उन सभी को प्रशिक्षित करना संभव नहीं है। इसलिए, इस क्षेत्र में विविध श्रमिकों को कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने के लक्ष्य को पूरा करने के लिए वैकल्पिक प्रणाली की आवश्यकता है। श्रम मंत्रालय, भारत सरकार ने निम्नलिखित चार समूहों के तहत असंगठित श्रम बल को वर्गीकृत किया है:

- व्यवसाय-छोटे और सीमांत किसान इत्यादि। (किसान श्रेणी-हेक्टेयर यानी भूमि स्वामित्व अधिग्रहण के आकार के आधार पर);

- रोजगार का स्वरूप कृषि मजदूर, बंधुआ मजदूर, प्रवासी श्रमिक आदि (इन श्रमिकों का आय स्तर कम है और रोजगार काफी अनियमित है);
- विशेष रूप से दबावयुक्त श्रेणियां– ताड़ी–मजदूर, सफाईकर्मी इत्यादि; तथा
- सेवा श्रेणियां– मछुआरे और महिलाएं, नाई, सब्जी और फल विक्रेता, समाचार पत्र विक्रेता आदि;
- इन चार श्रेणियों के अलावा, बड़ी संख्या में असंगठित मजदूर मौजूद हैं जैसे मोची, मशीन चालक, हथकरघा बुनकर, महिला दर्जी आदि। (भारत सरकार, 2012)।

भारत की तरह, अन्य विकासशील देशों को भी इसी तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसलिए सभी स्तरों पर इसके महत्व को पहचानना और ओ ई आर के उपयोग के माध्यम से मुक्त और दूरस्थ शिक्षा (ओ डी एल) प्रणाली में क्या हासिल किया जा सकता है, इसका आकलन करना समय की आवश्यकता है। सीखने वाले को सरल तरीके से सीखने के माहौल का लाभ उठाने में सक्षम बनाने के लिए अब एक तेजी से बहु–मॉडल वितरण तंत्र का उपयोग किया जा रहा है। व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण (वीईटी) और कौशल विकास के क्षेत्र में ओ डी एल के सिद्धांतों का समर्थन और प्रचार की भूमिका को समझने की आवश्यकता है। ओ डी एल प्रणाली का एक अन्य लाभ यह है कि कर्मचारी (सेवारत) अपनी वर्तमान नौकरी की बलि किए बिना अपनी गति और स्थान पर कौशल सीख सकते हैं। ओ डी एल ने, कई प्रौद्योगिकियों के एकीकरण के साथ, गैर परंपरागत मोड को शिक्षा और प्रशिक्षण की पारंपरिक प्रणाली के रूप में प्रभावी बना दिया है। ओ डी एल प्रणाली प्रशिक्षुओं के बीच कौशल, क्षमता निर्माण और रोजगार क्षमता को विकसित कर सकती है। दूरस्थ शिक्षा में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आई सी टी) के व्यापक उपयोग की आवश्यकता है जिसे एम ओ यू सी के प्लेटफार्मों में बढ़ाया जाना चाहिए। भारत सरकार के 'कौशल विकास पर 2015 की राष्ट्रीय नीति' दस्तावेज ने देश के विभिन्न क्षेत्रों में बिखरे हुए शिक्षार्थियों को कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए आधुनिक प्रशिक्षण तकनीकों के उपयोग पर भी प्रकाश डाला है। ओ ई आर उन छात्रों को संसाधनों की पहुंच प्रदान करने में मदद करता है जो कार्य प्रतिबद्धताओं, भौगोलिक दूरी (सीधी रेखा दूरी) या कौशल प्रशिक्षण प्राप्त करने में पर्याप्त पूर्व–शिक्षण अनुभव से वंचित थे। इसके संदर्भ में, लेखकों ने वर्तमान संदर्भ में ओईआर के स्थान पर 'ओपन स्किल ट्रेनिंग रिसोर्सेज (ओ.एस.टी.आर)' मुक्त कौशल प्रशिक्षण संसाधन का

इस्तेमाल किया। ओ.एस.टी.आर विशेष रूप से कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए विकसित किया जाएगा। इस पृष्ठभूमि के अंतर्गत, एक संक्षिप्त सर्वेक्षण आयोजित करते समय छात्रों के उपयोग पर छात्रों की धारणा को तलाशने का प्रयास किया गया है। यहां यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि प्रतिदर्श छात्र इग्नू में अपने संबंधित कार्यक्रमों का अध्ययन करने के समय (ओ.एस.टी.आर) का उपयोग नहीं कर रहे थे।

अध्ययन का उद्देश्य

संक्षिप्त सर्वेक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित के संबंध में अधिगमकर्त्ताओं की धारणा की पहचान करना था :

(क) मुक्त शैक्षणिक संसाधनों का उपयोग करके सीखना और पढ़ाना; तथा

(ख) शिक्षार्थियों के प्रदर्शन पर (ओ.एस.टी.आर) के उपयोग के प्रभाव।

अनुसंधान पद्धति

लेखकों ने अध्ययन के उद्देश्यों से संबंधित 32 प्रश्नों सहित एक प्रश्नावली तैयार की। प्रश्नावली जुलाई 2014 के दौरान 351 शिक्षार्थियों को ई-मेल किया गया था। केवल तीन व्यावसायिक कार्यक्रमों के अध्ययन के लिए यह इग्नू में पंजीकृत दूरस्थ शिक्षार्थियों तक सीमित था। टेलीफोन/ईमेल पते सहित पृष्ठभूमि की जानकारी को उनके संबंधित पंजीकरण फॉर्मों से संकलित किया गया था।

विश्लेषण और निष्कर्ष

सर्वेक्षण के आंकड़ा विश्लेषण से पता चलता है कि :

- व्यावसायिक अध्ययन करने वाले अधिकांश छात्र शहरी क्षेत्र (62.3%) से संबंधित थे जिनमें पुरुष (78.1%) और अविवाहित (68.3%) थे। लगभग आधे उत्तरदाता 21-25 वर्ष के आयु वर्ग के (49.4%) थे, इसके बाद आयु वर्ग 31-35 वर्ष (23.8%), 26-30 वर्ष (17.0%); और 36-40 वर्ष (9.8%) के थे।
- उनमें से लगभग सभी के पास स्मार्ट फोन (93%) थे। 43% के पास इंटरनेट सुविधा के साथ लैपटॉप/डेस्कटॉप था। उनमें से 63% के पास कंप्यूटर कौशल का ज्ञान था।
- अधिकांश उत्तरदाता ओ ई आर (91%) शब्द से अवगत नहीं थे। यह निष्कर्ष पिछले अध्ययन (हर्ट एल, 2013) की पुष्टि करते हैं ।

मुक्त विश्वविद्यालय में कौशल विकास के लिए ओ.एस.टी.आर पर शिक्षार्थियों के विचार (एन = 351)

ओ.यू. में कौशल विकास के लिए ओ.एस.टी.आर के उपयोग संबंधी वक्तव्य में उत्तरदाता 'सहमत' थे :

- यह पाठ्यपुस्तकों से (72%) कम महंगा होगा।
- यह साथी छात्रों (67%) के बीच विचार साझा करने में मदद करेगा।
- यह मौजूदा कौशल (67%) को बढ़ाएगा।
- ओ एस आर मौजूदा प्रणाली (59%) की तुलना में असाइनमेंट जमा करने में छात्रों के लिए सहायक होगा।
- यह प्रशिक्षुओं के नौकरी प्रदर्शन में मदद (57%) करेगा।
- यह असाइनमेंट /परियोजना/अंतिम परीक्षा में अंक/ग्रेड बढ़ाएगा (57%)
- यह अनुभव व प्राप्त करने और शिक्षुता (53%) में मदद करेगा।
- यह अध्ययन सामग्री समय पर प्राप्त न होने की समस्या को कम कर सकता है (49%)।
- वे एस.एल.एम. की बजाय ओ.एस.टी.आर. के माध्यम से सीखना पसंद करेंगे (47%)।
- शिक्षक (44%) के साथ संवाद करना आसान होगा,
- यह एस.एल.एम. (43%) से अधिक आत्मविश्वास पैदा करेगा।

ओ.एस.टी.आर. का उपयोग करने पर उत्तरदाताओं की धारणा का विश्लेषण बताता है कि इसका व्यक्ति के कौशल विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। वर्तमान अध्ययन के निष्कर्ष पूर्व अध्ययनों की रूपरेखा पर आधारित है अर्थात सामान्य रूप से, 'आई सी टी पर अधिगम धारणा, और विशेष रूप से ओ ई आर में' (एल-फहाद, 2009, हर्ट एल, 2013, स्टोडेल, आदि 2006, बरब्यूल आदि 2000, गाबा और सेठी, 2010, नेटटेल, आदि 2000, सेरानो आदि 2000) के निष्कर्षों की पुष्टि करते हैं। शिक्षार्थियों को लगा कि शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में प्रौद्योगिकी का उपयोग करने का लाभ यह है कि इसे किसी भी समय, कहीं भी इस्तेमाल किया जा सकता है और छात्रों के सीखने के अनुभव को यह समृद्ध करेगा (एल-फहाद, 2009)। सर्वेक्षण के निष्कर्ष अर्थात 'ओ ई आर की

सामग्री अच्छी होगी,' 'पिछले अध्ययन की पुष्टि करता है। डिजिटल प्रौद्योगिकी के तेज़ी से परिवर्तन के कारण मुक्त और दूरस्थ शिक्षा परिवर्तन के कगार पर है। शिक्षार्थी कहीं भी और कभी भी गुणवत्ता पाठ्यक्रम सामग्री का उपयोग कर सकते हैं। ओ ई आर पर छात्रों की धारणा के विश्लेषण ने इस धारणा का समर्थन किया जो स्वतंत्र रूप से काम कर सकता था। ओ ई आर कौशल को बढ़ाने के लिए एक प्रभावी माध्यम के रूप में माना जाता है। निष्कर्ष पहले के अध्ययनों की पुष्टि करते हैं कि आई सी टी छात्रों के संज्ञानात्मक कौशल को विकसित करता है (स्टेडेल आदि 2006)। ओ ई आर का उपयोग छात्रों को ऑनलाइन बैठने के लिए प्रेरित करेगा। यह उनके अध्ययन और आई.टी. कौशल को भी विकसित कर सकता है। बेट्स (1996) ने महसूस किया कि ज्ञान आधारित समाज के लिए प्रासंगिक उच्च कौशल विकसित करने की क्षमता कंप्यूटर आधारित दूरस्थ शिक्षा पाठ्यक्रम विकसित करने में एक प्रमुख चालक है। सेरानो और अलफोर्ड (2000) ने निष्कर्ष निकाला कि ई-लर्निंग शिक्षार्थियों को भाषा-सामग्री सीखने की गतिविधि में शामिल होने और अपनी उच्चतम महत्वपूर्ण सोच विकसित करने की शक्ति प्रदान करती है। यह अपने कौशल को बढ़ाने के लिए शिक्षार्थियों द्वारा ओ ई आर का उपयोग करने के समय लागू हो सकता है। हालांकि, कुछ शिक्षार्थियों को उच्च गति इंटरनेट कनेक्टिविटी की अनुपस्थिति में कौशल विकास के लिए इसके उपयोग के बारे में आशंका थी। ये निष्कर्ष (भंडीगादी आदि 2015) द्वारा रिपोर्ट किए गए अध्ययन की रूपरेखा पर आधारित हैं ।

अध्ययन में पाया गया कि कौशल विकास के लिए ओ.एस.टी.आर का उपयोग लागत प्रभावी होगा; यह साथी छात्रों के बीच विचार साझा करने और उनके मौजूदा कौशल को बढ़ाने में मदद करेगा। असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों के बीच मौजूदा कौशल यानी 'पूर्व शिक्षा' को पहचानना और राष्ट्रीय कौशल योग्यता फ्रेमवर्क (एनएसक्यूएफ) के अनुसार, अपने कौशल में वृद्धि, भारत में नीति निर्माताओं के बीच प्रमुख मुद्दे हैं (http://msde.gov.in/nsqf html.)।

पूर्व शिक्षा की मान्यता और ओ.एस.टी.आर. की पहचान

पूर्व शिक्षा की मान्यता (आरपीएल) मूल्यांकन का एक रूप है जो औपचारिक प्रशिक्षण, गैर-औपचारिक या अनौपचारिक प्रशिक्षण, कार्य अनुभव और जीवन अनुभव के माध्यम से प्राप्त कौशल और ज्ञान को स्वीकार करता है। दूसरे शब्दों में, यह मूल्यांकन का एक तरीका है जो बताता है कि प्रशिक्षु/शिक्षार्थी योग्यता या योग्यता के सेट के लिए

मूल्यांकन आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं या नहीं। एन.एस.क्यू.एफ. की आवश्यकता के अनुसार पूर्व शिक्षा की मान्यता में ओ.एस.टी.आर. एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। ओ.एस.टी.आर. ढांचा कार्यबल के ज्ञान और कौशल स्तर को मापने में मदद करेगा जो भारतीय श्रमिकों के कौशल अंतराल को संबोधित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। प्रस्तावित पहल कार्यस्थल पर उपयोग किए जाने वाले ज्ञान और अंतर्निहित कौशल के महत्वपूर्ण क्षेत्रों को मापती है :

- आर पी एल प्रशिक्षुओं के छिपे कौशल को पहचानेंगे; संरचित अधिगम से पूर्व अधिगम और प्रासंगिक प्रशिक्षण तक पहुंचने के लिए एक तरीके को सक्षम करेगा। यह मुक्त विश्वविद्यालय व्यवस्था के माध्यम से अधिक लचीलापन और कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम में अच्छी तरह से स्थापित होने की प्राथमिकता को सक्षम बनाएगा जिसे ओ.एस.टी.आर. के माध्यम से फिर से रूपांकित किया जा सकता है।
- नियोक्ता के लिए, आर पी एल प्रशिक्षुओं के बीच कौशल स्तर बनाने के लिए एक लागत प्रभावी और कुशल तरीका है। वर्तमान में, एनएसक्यूएफ आवश्यकता के अनुसार लाखों श्रमिकों को सुलभ उद्योग–प्रासंगिक कौशल 'प्रशिक्षण और प्रमाणीकरण' की आवश्यकता है।

मुक्त विश्वविद्यालय के लिए ओ.एस.टी.आर. का एक ढांचा

मुक्त विश्वविद्यालय के लिए कौशल विकास पाठ्यक्रम का ढांचा सक्षमता आधारित होना चाहिए। ये दक्षता प्रशिक्षुओं को विभिन्न कार्य परिस्थितियों में कार्यों को समझने में मदद करेगा जो मुख्य रूप से अधिगम के तीन उद्देश्यों से संबंधित हैं: (अ) व्यवसाय से संबंधित शैक्षिक अवधारणाओं पर ध्यान केंद्रित करने के साथ व्यवसाय का ज्ञान; (ब) व्यवसाय के लिए आवश्यक विभिन्न कार्यों को करने के लिए कौशल; (स) व्यवसाय की ओर रुख। ज्ञान और कौशल अच्छी तरह से रूपांकित किए गए व्यावसायिक कार्यक्रमों के माध्यम से विकसित किए जाते हैं जबकि दृष्टिकोण समय के साथ लागू किया जा सकता है। ओ.यू. एक विशेष कौशल विकास कार्यक्रम के ज्ञान में सुधार करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम की गुणवत्ता में सुधार के लिए योग्यता–आधारित पाठ्यक्रम की रूपरेखा और विकास महत्वपूर्ण है। मुक्त विश्वविद्यालय ओ.एस.टी.आर.

के माध्यम से उपलब्ध व्यावसायिक सामग्रियों को अनुकूलित, अपनाने या इन्हें पुनः उपयोग कर सकते हैं। देश भर में स्थानीय जरूरतों की आवश्यकता के अनुसार इसे स्थानीय भाषाओं में अनुवादित किया जाना चाहिए। दक्षताओं में संज्ञानात्मक और प्रभावशाली डोमेन भी शामिल हो सकते हैं। एन.एस.क्यू.एफ. आवश्यकता के अनुसार ओ.यू.आर. से प्राप्त कौशल को मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है।

ओ.एस.टी.आर. के माध्यम से मुक्त विश्वविद्यालयों के लिए एक कौशल और योग्यता-आधारित व्यावसायिक कार्यक्रम की निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए :

- **ओ.एस.टी.आर. की प्रासंगिकता :** एक विशेष व्यवसाय के कार्य (जॉब) विवरण से प्राप्त करने की अपेक्षित योग्यताएं जिसके लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किया गया है।
- **ओ.एस.टी.आर. के माध्यम से रोजगार परकताः** नौकरी के अवसरों के आधार पर नौकरी के विवरणों को देखा जाना चाहिए या उनकी पहचान की जानी चाहिए, जो कि ओ.एस.टी.आर. के माध्यम से प्रशिक्षित प्रशिक्षु के लिए उपलब्ध मजदूरी और स्व-रोज़गार श्रेणियों दोनों को वेब पर उपलब्ध कर सकें।
- **कौशल दक्षताओं का प्रमाणन :** योग्यता का वास्तविक प्रदर्शन व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम का प्राथमिक उद्देश्य है। स्थानीय कौशल परीक्षण मॉडल को स्थानीय जरूरतों के अनुसार फिर से रूपांकित किया जा सकता है।
- योग्यता-आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रशिक्षुओं को ई-प्रशिक्षण मॉडल का उपयोग करके प्रशिक्षण कार्यक्रम के माध्यम से अपनी गति से प्रगति करने की अनुमति देता है।
- **ओ.एस.टी.आर. के माध्यम से नौकरी प्रशिक्षणः** विशेषज्ञ श्रमिक नए प्रशिक्षुओं की तुलना में अपने काम का बेहतर वर्णन कर सकते हैं। वे कार्यकर्ता जिनके प्रदर्शन उनके कार्यस्थल पर बेहतर हैं, उस प्रकार की नौकरी में वे वास्तविक रूप में विशेषज्ञ हैं। हालांकि नए या कम कार्य अनुभव वाले पर्यवेक्षकों और प्रबंधकों को विकसित किए गए काम के बारे में बहुत कुछ पता हो सकता है, लेकिन आमतौर पर काम का अच्छा विश्लेषण करने के लिए उनमें विशेषज्ञता के आवश्यक स्तर की कमी होती है । ओ.एस.टी.आर का उपयोग समय-समय पर उनके मौजूदा कौशल को अपग्रेड करने में मदद कर सकता है।

- प्रशासनिक, पेशेवर, कार्यकारी, तकनीकी और परिचालन स्तर पर व्यवसायों का विश्लेषण करने के लिए ओ.एस.टी.आर. का उपयोग किया जा सकता है।

मिश्रित अधिगम दृष्टिकोण के माध्यम से कौशल-आधारित कार्यक्रमों की पेशकश की जा सकती है। अनुभव के लिए, कार्यक्रम/कार्य केंद्र के मौजूदा मॉडल को अपनाया जा सकता है। इन केंद्रों को विभिन्न सहायक सामग्रियों से लैस किया जा सकता है ताकि शिक्षार्थी उन कौशलों को हासिल कर सकें जो केंद्र ओ.एस.टी.आर. के माध्यम से प्रदान कर सकते हैं। बहु-मीडिया पैकेज पूरकों के साथ (सीडी/डीवीडी/यू ट्यूब/हैप्टीक डिवाइस/रेडियो/ टीवी कार्यक्रम) शिक्षार्थियों को स्वयं-अध्ययन करने और व्यक्तिगत रूप से काम करने में सक्षम बनाता है। बहुआयामी अधिगम दृष्टिकोण प्रशिक्षुओं को आत्म-अध्ययन करने की अनुमति देगा और इसे समूह-कार्य, कार्यशालाओं, ट्यूटोरियल और अन्य संरचित गतिविधियों के साथ पूरक किया जाएगा। इंटरनेट के माध्यम से आई.आई.टी. शिक्षार्थियों को कंप्यूटर पर ओ.एस.टी.आर. का उपयोग करने में सहायता देगा। यह स्व-अध्ययन मोड में हो सकता है या चैट, ई-मेल, वेब-कैम, वॉयस मेल इत्यादि के माध्यम से सहकर्मी और शिक्षक के साथ बातचीत हो सकती है। प्रस्तावित मॉडल, जो लागत प्रभावी है, ओपन यूनिवर्सिटी के परिप्रेक्ष्य हेतु उपयुक्त होगा। चांग आदि (2014) ने स्थापित किया है कि मिश्रित ई-लर्निंग आत्म-मूल्यांकन, ज्ञान और कौशल पर महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

कौशल विकास कार्यक्रमों का प्रमाणन

एन.एस.क्यू.एफ. आवश्यकताओं के अनुसार प्रमाणीकरण दिशानिर्देश तैयार करते समय मुक्त विश्वविद्यालयों को आवेदनों की समझ और कौशल प्राप्त करने पर ध्यान देना चाहिए। एन.एस.क्यू.एफ. को अधिक व्यवसाय मानकों को शामिल करने के लिए और उपचार की भी आवश्यकता है। यह भी सच है कि सभी कौशल-आधारित कार्यक्रमों के लिए मूल्यांकन प्रक्रियाओं को सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता है। यह व्यावसायिक व्यापार से भिन्न हो सकता है। इसलिए, मूल्यांकन के लिए मानक मानदंडों के विकास की आवश्यकता है। यह कौशल आधारित कार्यक्रमों का मूल्यांकन करने के लिए नए योग्यता परीक्षण मॉडल विकसित करने के लिए मुक्त विश्वविद्यालयों के बीच समस्याएं पैदा कर सकता है। एन.एस.क्यू.एफ. ने इन आधारों पर योग्यता के प्रमाणीकरण का भी सुझाव दिया है। मुक्त विश्वविद्यालयों समय-समय पर सरकार के सांविधिक निकायों द्वारा जारी दिशानिर्देशों के अनुसार ओ.एस.टी.आर. का उपयोग करके व्यावसायिक

व्यापार (कौशल और व्यावहारिक) की दक्षताओं की उपलब्धि के मूल्यांकन के लिए मूल्यांकन प्रक्रिया विकसित कर सकते हैं।

निष्कर्ष और सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन सूचना के प्राथमिक और माध्यमिक स्रोत पर आधारित है। लघु सर्वेक्षण के निष्कर्ष सामान्यीकृत नहीं किए जा सकते हैं, और प्रारंभिक निष्कर्षों के रूप में इसे माना जाना चाहिए। इसके प्रभाव और लागत प्रभाविकता के लिए और अनुसंधान की आवश्यकता है। विभिन्न मंचों पर ओ.ई.आर. का उपयोग करते समय विद्वानों ने पिछले शोध अध्ययनों जैसे– भाषा और सांस्कृतिक बाधाओं, प्रौद्योगिकी और इंटरनेट की पहुंच, बौद्धिक सम्पदा अधिकार, स्थायित्व और वित्त पोषण में कुछ चुनौतियों का समाधान किया है। इन चुनौतियों के बावजूद, मुक्त विश्वविद्यालयों में ओ.एस.टी.आर. का उपयोग करने का अभी भी एक फायदा है। यह बड़ी संख्या में शिक्षार्थियों को पाठ्यक्रम सामग्री ढांचे तक पहुंचाने और असाइनमेंट/परियोजनाओं और व्यावहारिक गतिविधियों की तैयारी के लिए अपने साथी छात्रों से समर्थन प्राप्त करने की अनुमति देता है। वित्तपोषण की मॉडल मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा अपनाई गई परिचालन प्रणाली पर सीधे निर्भर करता है। अतीत में, विभिन्न देशों में कौशल विकास कार्यक्रम नियोक्ताओं द्वारा अपने स्वयं के श्रमिकों के लिए संचालित किया जाता था। लेकिन, समय बीतने के साथ, नियोक्ता द्वारा आवश्यक कौशल अधिक जटिल हो जाता है। ओ.एस.टी.आर. लागत को कम करके इस समस्या को हल कर सकता है।

(कृपया ध्यान दें: इस आलेख में व्यक्त विचार लेखकों के निजी विचार हैं और इन्हें उनके संस्थान से जोड़कर न देखा जाए, जहां वे वर्तमान में कार्य कर रहे हैं।)

संदर्भ

एल.फहाद (2009). स्टूडेंट्स एटीटूड एंड परसेप्शन टुवर्ड्स द एफिक्टिवनेस ऑफ मोबाइल लर्निंग इन काइंड साऊद यूनिवर्सिटी, सऊदी अरब। द *टर्किश ऑनलाइन जर्नल ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलॉजी (टूजेट)*, 8(2) रिट्रीव्ड एट http://www.toject.net/articles/Vi2/8210/pdf

एलन, आई. और जे. सिमन (2014)। *ओपनिंग द करीकुलम: ओईआर इन यूएस हायर एजुकेशन.* रिट्रीवड एट http://www.onlinesurvey.com

अनुरुधिका बी.जी.एच, के.ए.सी. अलविस, टी.डी.टी.एल. धनपाला, और के. केशीश्वरन (2015)। *''टुवर्ड्स अ न्यू अवेनुए आफ ओपन लर्निंग:टीचर स्टूडेंट्स' परसेप्शन*

ऑन एक्सप्रिएंस ओबटेन थ्रू ओइआर बेस्ड इ-लर्निंग कोर्स.'' पेपर प्रेसेंटेड एट 29 एनुअल कांफ्रेंस ऑफ द एशियन एसोसिएशन ऑफ ओपन यूनिवर्सिटी हेल्ड एट कुआलालमपुर (मलेशिया) फ्रॉम नवम्बर 30 से दिसम्बर 2.

बेट्स, ए.डब्ल्यू (1996): द इम्पेक्ट आफ टेक्नोलॉजिकल चेंज ऑन ओपन एंड डिस्टेंस लर्निंग. केनोट एट ओपन एड्रेस लर्निंग: योर फ्यूचर डिपेंड्स ऑन आईटी. *क्वींसलैंड ओपन लर्निंग नेटवर्क, ब्रिस्बेन*, क्वींसलैंड, ऑस्ट्रेलिया

भंदीगडी, पी. एंड एम.बी. मेनन (2015). *डिजाईन एंड डिलेवरी ऑफ एमओओसीस इन वावासन ओपन यूनिवर्सिटी: अ क्रिटिकल रिफ्लेकसन.* पेपर प्रेसेंटेड एट 29 एनुअल कांफ्रेंस आफ द एशियन एसोसिएशन आफ ओपन यूनिवर्सिटी हेल्ड एट कुआलालमपुर (मलेशिया) फ्रॉम नवम्बर 30 – दिसम्बर 2.

बुर्बुलेस, एन.सी. एंड टी.ए. कालिस्टर (2002) *यूनिवर्सिटीज इन ट्रांजीशन: द प्रॉमिस एंड द चैलेंज ऑफ न्यू टेक्नोलॉजीज,* टीचर्स कॉलेज रोड, 102(2).

बुचर, एन. (2011). *अ बेसिक गाइड टू ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज (ओईआर).* वैंकूवर: कॉमनवेल्थ आफ लर्निंग रिट्रीव फ्रॉम http://www.col.org/Publication Documents/Basic-Guide&To-OER.pdf

चांग, सी.के.एम.शू, शि. लिआंग, जे.एस.टी.एस.एंड, और वाई.एस.एच.एस.यू. (2014). इज ब्लेंडेड-ई-लर्निंग एस मिजर्ड बाई एन अचीवमेंट टेस्ट एंड सेल्फ-असेसमेंट बेटर देन ट्रेडिशनल क्लासरूम लर्निंग फॉर वोकेशनल हाई स्टूडेंट्स? द *इंटरनेशनल रिव्यू ऑफ रिसर्च इन ओपन एंड डिस्टेंस लर्निंग,* 15(2): 213-231।

कोबो, सी. (2013). एक्सप्लोरेशन आफ ओपन एजुकेशन रिसोर्सेज इन नॉन-इंग्लिश स्पीकिंग कम्युनिटीज. इंटरनेशनल रिव्यू आफ रिसर्च इन ओपन एंड डिस्टेंस लर्निंग, 14(2).

सीओएल (2011). अ बेसिक गाइड टू ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज (ओईआर), कनाडा: *कॉमनवेल्थ ऑफ लर्निंग* (सीओएल).

डी. लैंगेन (2013). स्ट्रेटेजीज फॉर सस्टेनेबल बिज़नस मॉडल फॉर ओईआर. *इंटरनेशनल रिव्यू आफ रिसर्च इन ओपन एंड डिस्टेंस लर्निंग,* 14(2). http://www.irrodl.org

धनराजन, जी. (2013). *''ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज: अ पर्सपेक्टिव ऑन क्वालिटी''*. रिपोर्ट ऑन रीजनल कंसल्टेशन वर्कशॉप ऑन डेवलपिंग क्वालिटी गाइडलाइन्स फॉर ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज. नई दिल्ली: सीईएमसीए.

डॉन, ओल्कोट. जे.आर. (2012). *ओईआर पर्सपेक्टिव: इमेजिंग इश्यूज फॉर यूनिवर्सिटीज.* डिस्टेंस एजुकेशन, 33 (2): 283-290.

फैरो, आर., आर.पिट, बी. आर्कोस, एल. पेरीमैन, एम. वेलर, और पी.एम.सी. एंड्रयू (2015). इम्पैक्ट ऑफ ओईआर यूज ऑन टीचिंग एंड लर्निंग: डाटा फ्रॉम ओईआर रिसर्च हब (2013-2014). *ब्रिटिश जर्नल आफ एजुकेशनल टेक्नोलॉजी,* 46(5): 972-976.

गाबा, ए., एंड एस.एस. सेठी (2010). लर्नर्स' परसेप्शन टुवर्ड्स आईसीटी : अ केस स्टडी ऑफ इग्नू, *इंडियन जर्नल ऑफ ओपन लर्निंग*, 19(3): 143–158

गाबा, ए., एस. पांडा, सी.आर.के. मूर्ति (2011). कास्टिंग ऑफ डिस्टेंस लर्निंग: अ स्टडी ऑफ द इंडिया मेगा ओपन यूनिवर्सिटी. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इस्ट्रक्शनल टेक्नोलॉजी एंड डिस्टेंस लर्निंग.* यूएसए, जून, 8 (6.59) (http://www.itdl.org/Journal/Jun-11/Jun-11.pdf).

जीओआई (2009): *नेशनल स्किल डेवलपमेंट पालिसी.* www.ilo.org.

जीओआई (2009): *नेशनल नॉलेज कमीशन रिपोर्ट.* गवर्नमेंट ऑफ इंडिया. नई दिल्ली.

जीओआई (2011): *इंडिया वर्किंग ग्रुप ऑन ओपन एजुकेशन रिसोर्सेज रिपोर्ट,* गवर्नमेंट ऑफ इंडिया

जीओआई (2012). रिपोर्ट ऑफ द समिति ऑन अन-आर्गेनाईस्ड सेक्टर स्टैटिक्स, नई दिल्ली: *नेशनल स्टैटिक्स कमीशन.* http://mospi.nic.in/Mospi New/upload/nsc report un sec 14mar12.pdf.

हर्ट एल.(2013). *डी मोंटफोर्ट स्टूडेंट परसेप्शन एंड अंडरस्टैंडिंग ऑफ ओइआर. रिसर्च डिजरटेसन.* www.sicklecellanemia.org.

हिल्टन III जे.एल., जे. रॉबिन्सन, डी.विले, एंड जे.डी.एक्केर्मन (2014). *कॉस्ट सेविंग्स अचीव्ड* इन टू सेमेस्टर थ्रू द एडॉप्शन ऑफ ओ.ई.आर. 15(2). http://www.irrodl.org

कंवर, ए. (2015). ''*ओपन एजुकेशन रिसोर्सेज (ओईआर): वट, वाई एंड हाउ?*''ओइआर वर्कशॉप पापुआ न्यू गिनी ऑन मार्च 26 (https://www.col.org/news/speeches-presentations/open-education/resources-oer-what-why-how).

कंवर, ए., बी. कोधनदरमान एंड ए. उमर (2010). टुवर्ड्स सस्टेनेबल ओपन एजुकेशन रिसोर्सेज: ए पर्सपेक्टिव फ्रॉम द ग्लोबल. *अमेरिकन जर्नल ऑफ डिस्टेंस एजुकेशन*, 24 pp. 65–80, doi 10, 1080./089923641003696588

कुमार वी.एम.एस. (2009). ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज इन इंडिया नेशनल डेवलपमेंट. ओपन लर्निंग: द *जर्नल ऑफ ओपन, डिस्टेंस एंड इ-लर्निंग*, 24 (1):77–84.

लेसर्क्ले, डी. (2011). *गिविंग नॉलेज फॉर फ्री: द इमर्जेंस ऑफ ओपन एजुकेशन रिसोर्सेज.* http://www.oecd.org/dataoecd/35/7/38654317.pdf

मिश्रा पी. (2013). *क्वालिटी एस्वेरेंस इन ओइआर बेस्ड कोर्सवेयर: अ ट्रिपार्टी रिव्यू मैकेनिज्म.* रिपोर्ट ऑन रीजनल कंसल्टेशन वर्कशॉप ऑन डेवलपिंग क्वालिटी गाइडलाइन्स फॉर ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज. न्यू दिल्ली: सीइएमसीए.

नेल्लेस, आदि (2000). *टेक्नोलॉजी एंड लर्निंग: द 'नो सिग्निफीकेंट डिफरेंस' फेनोमेनन: अ स्ट्रक्चरल एनालिसिस ऑफ रिसर्च ऑन टेक्नोलॉजी एनहांस्ड इंस्ट्रक्शन,* डिस्ट्रिब्यूटेड

लर्निंग इम्पैक्ट इवैल्यूएशन, (सं.) द्यूबन एंड मोस्कल, ऑर्लैंडो, यूनिवर्सिटी ऑफ सेंट्रल फ्लोरिडा.

एनआईइएसबीयूडी (2014). गेटिंग अहेड विथ द यूज़ ऑफ ओइआर फॉर टीचिंग एंड लर्निंग, इंडिया'ज फर्स्ट हैंड्स-ऑन वर्कशॉप ऑन यूज़ ऑफ ओइआर फॉर स्किल डेवलपमेंट. http://niesbud.nic.in/docs/press/release/for/OER/24/10/14.pdf

पालोवस्की, जे. एम. (2007). द क्वालिटी एडाप्टेशन मॉडल: एडाप्टेशन एंड एडॉप्शन ऑफ द क्वालिटी स्टैण्डर्ड आइएसओ/आईइसी 19796-1 फॉर लर्निंग एजुकेशन एंड ट्रेर्निंग. एजुकेशन टेक्नोलॉजी एंड सोसाइटी, 10, pp.3-16.

रोबर्ट, बी.एफ.जूनियर., डी.एल.ए.एच. कोन्सुएलो, एंड ए.डी.एल.पी. रेंअल्ड (2015). ''अप्लाईंग द मल्टीप्ल पाथ्स अप्रोअचेस फॉर फिलिपीन बायोडायवर्सिटी ओपन एजुकेशन रिसोर्सेज''. 29 एनुअल कांफ्रेंस ऑफ द एसोसिएशन ऑफ ओपन यूनिवर्सिटीज हेल्ड एट कुआलालामपुर (मलेसिया) फ्रॉम नवम्बर 30 - दिसम्बर 2.

स्तोदेल, इ.जे., टी.एल. थोमसन एंड सी.जे. मेक डोनाल्ड (2006). लर्नेर्स पर्सपेक्टिव ऑन व्हाट इस मिस्सिंग फ्रॉम ऑनलाइन लर्निंग: इंटरप्रिटेशंस थ्रू द कम्यूनिटी आफ इन्क्वायरी फ्रेमवर्क, आईआरआरओडीएल, 7(3).

सेर्रानो, सी. एंड आर.एल. एल्फोर्ड (2000). ''वर्चुअल लैंग्वेजेज: एन इनोवेटिव एप्रोच टू टीचिंग इएफएल/इएसएल इंग्लिश एज अ फौरन लैंग्वेज ऑन द वर्ल्ड वेब'', एल. लायड एंड लेस लायड (सं.) टीचिंग विथ टेक्नोलॉजी: रिथिंकिंग ट्रेडिशन, मेडफोर्ड, एनजे: इनफार्मेशन टुडे.

यूनेस्को (2012). वर्ल्ड ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज (ओएर) कांग्रेस, पेरिस, जून 20-22, 2012? http://www.unesco.org/new/fileadmin/MULTI MEDIA/HQ/CI/CI/pdf/Events/English/ParisWIkiEducator (2009). क्वालिटी एश्वेरेंस फ्रेमवर्क पोर्टल. http://wikieducator.org/wikieducator: qualityassurance/framework/contribution/levels.

(जेपा, XXXI, अक्तूबर, 2017 से साभार)

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

भाषा-अध्ययन की ज्ञानमीमांसा
विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के प्ररिप्रेक्ष्य में

राघवेन्द्र प्रपन्न*

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र के पांच केन्द्रीय सरोकार हैं। पहला– समानता एवं समावेशी शिक्षा के विमर्श एवं उससे निकले नीतिगत संदर्भ की पहचान करना। दूसरा– समानता एवं समावेशी शिक्षा के नीतिगत संदर्भ के समक्ष माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर की हिन्दी की पाठ्यपुस्तकों (एनसीईआरटी द्वारा तैयार की गई) को रखकर उनकी पड़ताल करना। तीसरा– विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के नजरिए से इनके सामाजिक एवं शिक्षणशास्त्रीय जगत को समझने का प्रयास। चौथा– इस संदर्भ में उपरोक्त पाठ्यपुस्तकों के संवादी-असंवादी चरित्र की पड़ताल। पांचवा– विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के मद्देनजर उपलब्ध नीतिगत, शैक्षिक एवं विमर्शगत संदर्भ के साथ पाठ्यचर्या एवं पाठ्यपुस्तकों की संगति-असंगति एवं द्वन्द्वों की व्याख्या और विवेचना।

शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों पर सन् 1990 में हुए सलामॉक सम्मेलन के बाद भारतीय शिक्षा में समावेशी शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। इस सम्मेलन ने वैश्विक स्तर पर समावेशी शिक्षा के लिए नीति का मुद्दा तय करने में दूरगामी भूमिका का निर्वाह किया। ऐसे में यह जायज है कि सन् 1990 के बाद राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एनसीईआरटी) द्वारा बनाई जाने वाली पाठ्यचर्याओं में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की एवं समावेशी शिक्षा की बात हो। सन् 1990 के बाद एनसीईआरटी द्वारा निर्मित अभी तक दो पाठ्यचर्याएं आई हैं। पहली, सन 2000 में निर्मित 'विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा' (आगे से इसे 'पाठ्यचर्या

*प्राध्यापक, महर्षि वाल्मीकि कॉलेज ऑफ एजुकेशन, दिल्ली विश्वविद्यालय।

2000' के नाम से संबोधित किया जायेगा), और दूसरी सन् 2005 में निर्मित 'राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा' (आगे से इसे 'पाठ्यचर्या 2005' के नाम से संबोधित किया जायेगा।)। पाठ्यचर्या 2005 के मार्गदर्शन में जिन इक्कीस फोकस समूहों का गठन किया गया उसमें एक 'विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की शिक्षा' भी शामिल था।

शिक्षा-विमर्श की पड़ताल यह बतलाती है कि समावेशी शिक्षा का विमर्श वस्तुतः अब एक विचारधारात्मक समाज-दर्शन की हैसियत अख़्तियार कर रहा है। यही वजह है कि चाहे नीतिगत विमर्श का दायरा हो या संरचनात्मक ढाँचे का मामला या फिर उसके क्रियान्वयन का मसला हो समावेशी शिक्षा, गुणवत्ता वाली शिक्षा की कसौटी बन रही है। इसका कुछ प्रतिबिम्बन पाठ्यचर्या 2000 में भी मिलता है। इस दस्तावेज़ ने विशेष आवश्यकता वाले सभी विद्यार्थियों के वैयक्तिक शिक्षण के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए शैक्षिक अनुभवों को समेकित करने की दृष्टि से ईकाई-अवधारणा को एक सार्थक साधन माना है। उपरोक्त दस्तावेज ने यह जोर देकर कहा है कि पाठ्यचर्या योजना, कक्षा-सेवाओं, विशेष सहायता सेवाओं, सेवाकर्मी और पाठ्यचर्यागत गतिविधियों के बीच अंतर्संबंध स्थापित किया जाना चाहिए जिससे कि विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए नए और प्रभावी कार्यक्रम की रचना की जा सके। उपरोक्त दस्तावेज उस अवसर को सृजित करने की सिफारिश करता है जिससे कि विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की आसान पहुंच पाठ्यचर्या एवं 'व्यक्तिगत रूप से सिखाने वाली शिक्षण-पद्धति' तक हो सके। पाठ्यचर्या 2000 विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के लिए निष्ठावान शिक्षण, माता-पिता को भागीदार बनाते हुए उनका सबलीकरण, व्यक्तिपरक शिक्षण प्रविधि, व्यक्तिगत अभिरुचि के ख्याल को महत्त्वपूर्ण कारक मानता है (एनसीईआरटी, 2000, पृ. 10)। पाठ्यचर्या 2005 भी समावेशी एवं अर्थपूर्ण शिक्षा को पाठ्यचर्या विकास का एक समसामयिक सरोकार मानती है (एनसीईआरटी, 2006 क)। पाठ्यचर्या 2005 की मान्यता है कि शिल्पकला की विरासत को पाठ्यचर्या में शामिल करना भी समावेशी शिक्षा में सहायक है, विद्यार्थियों में गलाकाटू प्रतियोगिता की जगह समावेशी मूल्य का विकास होना चाहिए और समावेशी शिक्षा का संबंध, शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम, कक्षा का वातावरण, पाठ्यचर्या-निर्माण एवं पाठ्यपुस्तक से है। इस संदर्भ में उपरोक्त दस्तावेज को उद्धृत करना समीचीन होगा:

> पाठ्यचर्या निर्माण या पाठ्यपुस्तक लेखन के क्रम में सांस्कृतिक भिन्नता की बात बाद में आई याद की तरह दिखती है जबकि उसे उसका अभिन्न हिस्सा होना चाहिए। लिंग और विशेष आवश्यकता के मामले भी इसी तरह के हैं,'' (वही, पैरा 3.1, पृ. 116)। वह व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण (वही, पैरा 3.4.4, पृ. 172) तथा विश्वविद्यालय शिक्षा को भी समावेशी बनाने पर जोर डालती है (वही, पैरा 3.3.2, पृ. 122)।

विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए एनसीईआरटी फोकस ग्रुप द्वारा निर्मित आधार-पत्र 2005 मानता है कि समावेशी पाठ्यचर्या, सामाजिक न्याय तथा शिक्षा में भागीदारी के सिद्धान्त पर चलते हुए लैंगिकता, नृजातीयता, स्थानीय समूह, समाजिक-आर्थिक हैसियत, समर्थता एवं 'विकलांगता' के आधार पर विषमतामूलक न होकर सभी को शैक्षिक अनुभव देने की संभावना वाला होगा। उसकी नज़र में वर्तमान पाठ्यचर्या विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी के लिए प्रासंगिक नहीं है। अत: ऐसी पाठ्यचर्या बनाए जाने की जरुरत है जो विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी सहित सभी के लिए प्रासंगिक हो।

उपरोक्त विवरण यह मानने का पर्याप्त आधार देता है कि पाठ्यचर्या 2005 विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को लेकर संजीदा है। उपरोक्त विवरणों के आधार पर यह वैध अपेक्षा की जा सकती है कि जब पाठ्यचर्या 2000 एवं 2005 के आधार पर पाठ्यपुस्तकें बन रही हों तो उनमें यह ध्यान रखा जाए कि वे विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को लेकर समावेशी रुख़ का प्रदर्शन करें।

पाठ्यपुस्तक 2000 एवं पाठ्यपुस्तक 2005 को उपरोक्त कसौटी पर कसने के बाद जो आँकड़े सामने आए उसे अगले पृष्ठ पर प्रस्तुत तालिका-1 में दिया जा रहा है।

तालिका-1 में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि पाठ्यचर्या 2000 एवं पाठ्यचर्या 2005 पर आधारित कुल 16 पाठ्यपुस्तकों की गद्य विधा में केवल एक ही पाठ ('गूँगे', कक्षा 11 ऐच्छिक, अंतरा, भाग 1) विशेष आवश्कता वाले विद्यार्थियों से संबंधित है। यह पाठ ऐसे किशोर के मनो-भाविक एवं भौतिक-जगत का बयान करता है जो बोल पाने में असमर्थ हैं।

पाठ्यचर्या 2000 एवं पाठ्यचर्या 2005 पर आधारित हिन्दी की पाठ्यपुस्तकों की तुलनात्मक तालिका - गद्य

तालिका-1

केन्द्रीय/प्रधान चरित्र के रूप में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों का प्रतिनिधित्व

	पाठ्यपुस्तकें 2000				*पाठ्यपुस्तकें 2005*		
कक्षा	*कुल पाठ*	*प्रधान/केन्द्रीय चरित्र के रूप में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी*	*प्रतिशत में*	*कक्षा*	*कुल पाठ*	*प्रधान/केन्द्रीय चरित्र के रूप में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी*	*प्रतिशत में*
12 ए	10	0	0	12 ए	10	0	0
12 अ	7	0	0	12 अ	8	0	0
11 ए	9	0	0	11 ए	9	1	11.11
11 अ	8	0	0	11 अ	10	0	0
10 द्वि	7	0	0	10 द्वि	8	0	0
10 अ	9	0	0	10 अ	8	0	0
9 द्वि	9	0	0	9 द्वि	8	0	0
9 अ	9	0	0	9 अ	8	0	0
कुल	**68**	**0**	**0.00**	**कुल**	**69**	**1**	**1.44**

पाठ्यपुस्तक 2000 एवं पाठ्यपुस्तक 2005 की पद्य-विधा में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के जगत को कितनी जगह दी गई है, इसका ब्यौरा तालिका-3 में दिया जा रहा है:

पाठ्यचर्या 2000 एवं पाठ्यचर्या 2005 पर आधारित हिन्दी की पाठ्यपुस्तकों की तुलनात्मक तालिका - पद्य

तालिका-2

केन्द्रीय/प्रधान चरित्र/मुद्दा के रूप में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों का प्रतिनिधित्व

	पाठ्यपुस्तकें 2000				*पाठ्यपुस्तकें 2005*		
कक्षा	*कुल कविता*	*प्रधान/केन्द्रीय चरित्र के रूप रूप में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी*	*प्रतिशत में*	*कक्षा*	*कुल कविता*	*प्रधान/केन्द्रीय चरित्र के रूप में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी*	*प्रतिशत में*
12 ए	24	0	0	12 ए	20	0	0
12 अ	15	0	0	12 अ	15	0	0
11 ए	22	0	0	11 ए	17	0	0
11 अ	16	0	0	11 अ	13	0	0
10 द्वि	11	0	0	10 द्वि	9	0	0
10 अ	17	0	0	10 अ	16	0	0
9 द्वि	18	0	0	9 द्वि	9	0	0
9 अ	11	0	0	9 अ	9	0	0
कुल	**134**	**0**	**0.00**	**कुल**	**108**	**0**	**0**

तालिका-2 का अवलोकन बतलाता है कि पाठ्यचर्या 2005 आधारित आठ पाठ्यपुस्तकों की पद्य विधा में कुल 75 कवियों की कुल 108 कविताएँ हैं। पर इनमें एक भी ऐसी कविता नहीं हैं जो विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की बात करती हो। यही हाल पाठ्यपुस्तक 2000 का है। इसमें 93 कवियों की कुल 134 कविताएँ हैं, पर इनमें भी ऐसी एक भी कविता नहीं है जो विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की बात करती हो। ऊपर यह चर्चा की जा चुकी है कि पाठ्यपुस्तक 2005 की गद्य विधा में कुल

69 पाठ हैं। इनमें कुल एक ही कहानी ऐसी है जो बोल न पाने वाले किशोर पर केन्द्रित है। इसी तरह पाठ्यपुस्तक 2000 में कुल 68 पाठ हैं जिसमें एक भी पाठ ऐसा नहीं है जो विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की बात करता हो। पाठ्यपुस्तक 2005 में शामिल कहानी 'गूँगे' अवश्य ही एक ताकतवर कहानी है, जो विशेष आवश्यकता वाले किशोर की समाजिक-सांस्कृतिक वंचना, प्रताड़ना एवं उसकी विडम्बना को बहुत संवेदनशील तरीके से उभारती है। रांगेय राघव जैसे सशक्त कथाकार की साहित्यिक दृष्टि-संवेदना ने इसे जीवंत किया है। पाठ परिचय में कहा गया है, '' 'गूँगे' में एक गूँगे किशोर के माध्यम से शोषित मानव की असहायता का चित्रण किया गया है जो कभी तो वह मूक भाव से सब अत्याचार सह लेता है और कभी विरोध में आक्रोश व्यक्त करता है'' (पृ. 43-44)।

निहितार्थ यह है कि पाठ्यपुस्तक 2000 एवं पाठ्यपुस्तक 2005 में गद्य-पद्य, दोनों विधाओं को मिलाकर ऐसी रचना नगण्य हैं जो विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की दुनिया, उनका बचपन, किशोर, यौवन, उनके भोगे यथार्थ, उनकी चुनौतियों तथा समर्थ माने जाने वालों की वर्चस्वशाली दुनिया में उनकी जगह को प्रकाश में लाती हो।

एनसीईआरटी द्वारा सन् 2006 में लैंगिकता और सन् 2010 में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के मुद्दे पर निर्मित आधार-पत्र में नारी तथा दलित ज्ञानमीमांसा के कोण से पाठ्यपुस्तकों के सामाजिक चरित्र की विषमता को उजागर किया गया है। पर एनसीईआरटी द्वारा ही सन् 2006 में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के मुद्दे पर निर्मित आधार पत्र, पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों के सामाजिक चरित्र की समीक्षा पेश करता हुआ नजर नहीं आता है। इस तरह हम देखते हैं कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति से लेकर एनसीईआरटी द्वारा निर्मित आधार पत्र तक के दस्तावेश विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिहाज से पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों के समाजिक-दार्शनिक चरित्र पर खामोश हैं।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के कोण से पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों से संबंधित कोई समाजिक-दार्शनिक मुद्दा भी हो सकता है, इसका संज्ञान तथा विमर्श, नीतिगत दस्तावेज़ में देखने को नहीं

मिलता है। पाठ्यपुस्तकों में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की दुनिया की अनुपस्थिति के पीछे नीतिगत दस्तावेज़ों की यह अनभिज्ञता भी एक मजबूत वजह हो सकती है।

अब सवाल यह है कि विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संदर्भ में पाठ्यपुस्तकों की संवेदनहीनता की जड़ें कहाँ–कहाँ हैं। यानी पाठ्यपुस्तकों में अगर विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संबंध में कोई जिक्र नहीं मिलता – एक अपवाद को छोड़कर–तो, इसकी संभावित जड़ें कहाँ हैं। इस प्रश्न के उत्तर तलाशने के क्रम में अगर हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 पर जाते हैं तो यह वजह वहाँ भी दिखती है।

शिक्षा में समानता के उद्देश्य के तहत राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने जिनके प्रति अपना सरोकार प्रकट किया है वे हैं– महिला, अनुसूचित जाति, अनसूचित जनजाति, शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए दूसरे वर्ग और क्षेत्र, 'अल्पसंख्यक' एवं 'विकलांग'। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें महिलाओं, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति तथा अल्पसंख्यक समुदाय का प्रतिनिधित्व करती हैं या नहीं, इससे संबंधी चिन्ताएँ फिर भी देखने को मिलती हैं पर विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के साथ शिक्षा की विषयवस्तु का बर्ताव कैसा रहा है, इससे संबंधी विमर्श देखने को नहीं मिलता। मसलन राष्ट्रीय शिक्षा नीति, पाठ्यचर्या, आधार पत्र उपरोक्त संदर्भ में कोई बात नहीं करते।

समावेशी शिक्षा की बात तो की जा रही हैं पर पाठ्यपुस्तकें इस लिहाज से भिन्न कैसे होंगी। इस संबंधी कोई ब्यौरा देखने को नहीं मिलता। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं 1992, इनको दी जाने वाली सुविधाओं एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण की बात करती हैं, शिक्षकों, खासतौर पर प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को भी नया रूप देने की बात करती है, पर विषयवस्तु कैसी होगी इस पर कोई विचार देखने को नहीं मिलता है। महिलाओं के संबध में पितृसत्ता और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति एवं अल्पसंख्यक के संबंध में उच्चवर्ण/सवर्ण, ब्राह्मणवादी, मनुवादी एवं बहुतायत का वर्चस्व जैसी अवधारणाओं के जरिए पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण हम पाते हैं। पर पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तक विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के ऊपर तथाकथित सबल शरीर माने जाने वालों का वर्चस्व कायम करने का काम करती है या नहीं, अगर करती है तो किस तरह– इस संबंध में अध्ययन, शोध अभी प्रतीक्षारत हैं।

दूसरा कारण अकादमिक हलकों का है। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक के संदर्भ में पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों के सामाजिक चरित्र संबंधी शोध एवं अध्ययन तो फिर भी उपलब्ध हैं। पर विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संबंध में सामान्य तौर पर ऐसा अध्ययन उपलब्ध नहीं है। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक ज्ञानमीमांसा की दृष्टि से पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक विश्लेषण संबंधी शोध एवं अध्ययन के उदाहरण हैं– भारत सरकार, 1990, 2006 एवं 2009; ऐलय्या 1996; बाला, 1997; कुमार, 1998; प्रोब रिपोर्ट, 1998; आहूजा, 1999; भोग, 2002; प्रपन्न, 2004; रज़्ज़ाक, 2006; निरंतर, 2010.

दूसरे शब्दों में पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें बाकी की दुनिया के विद्यार्थियों के समक्ष विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के भोगे यथार्थ, देश–दुनिया के निर्माण में उनके योगदान, उनके संघर्ष–प्रतिरोध, उनकी हार और जीत, निराशा एवं कुंठा और उम्मीद को सामने लाने का काम करती है या नहीं, उपरोक्त सभी सवाल अभी भारत के शैक्षिक परिदृश्य में संबोधित किए जाने की प्रतिक्षा में हैं। लोकतांत्रिकता, विविधता, समानता, बालकेन्द्रीयता, संदर्भगतता, निर्मितिवाद जैसे विमर्श की ओर शिक्षा को बढ़ाने के लिए आवश्यक है कि विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों का अध्ययन–विश्लेषण एवं रचना हो ताकि हम 'संभवता की भाषा' तलाश कर सकें न कि दीनता और गैर–उम्मीदी की।

संदर्भ

आहूजा, जे. (1999). *जेण्डर वॉयस इन स्कूल टेक्स्ट बुक्स.* दक्षिण एशियाई शिक्षा सम्मेलन. नवम्बर 14–18, 1999. अप्रकाशित. शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय.

एनसीईआरटी. (2010). *अनुसूचित जाति और जनजाति के बच्चों की समस्याएं– राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र.* नई दिल्ली : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्.

एनसीईआरटी. (2006 क). *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005.* नई दिल्ली : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्.

एनसीईआरटी. (2006 ख). *जेण्डर इश्यूज इन एजूकेशन : राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र.* नई दिल्ली : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्.

एनसीईआरटी. (2006 ग). *एजूकेशन ऑफ चिल्ड्रेन विद स्पेशल नीड्स : राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र.* नई दिल्ली : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्.

एनसीईआरटी (2000). *विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा.* नई दिल्ली : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्.

एलैय्या, के. (1996). *व्हाई आई एम नॉट ए हिन्दू.* कलकत्ता : साम्या.

कुमार, कृ. (1998). *शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व.* नई दिल्ली : ग्रंथशिल्पी.

निरंतर. (2010). *टेक्सट्बुक रिजाइमस् : ए फेमनिस्ट क्रिटिक ऑफ नेशन एण्ड आइडेन्टिटी.* नई दिल्ली : निरंतर.

प्रपन्न, रा. (2004). भारतीय शिक्षा में लैंगिक समता एवं समानता का वैश्विक संकल्प. *परिप्रेक्ष्य* 11(2), 77–87.

प्रोब दल. (1998). *पब्लिक रिपोर्ट ऑन बेसिक एजुकेशन इन इण्डिया.* नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

बाला, ऋतु (1997). *माध्यमिक स्तरीय पाठ्यपुस्तकों में वंचितों की छवि.* एम.फिल शोध प्रबंध (अप्रकाशित). शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली.

भारत सरकार. (2009). *केब रिपोर्टस ऑफ दि सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड ऑफ एजुकेशन, (वॉल्यूम 1).* नई दिल्ली : मा.सं.वि.मं.

भारत सरकार. (2006). *सोशल, एकोनॉमिक एण्ड एजुकेशनल स्टेट्स ऑफ द मुस्लिम कॉम्युनिटी ऑफ इण्डिया.* नई दिल्ली : मा.सं.वि.मं.

भारत सरकार. (1990). *प्रबुद्ध एवं मानवीय समाज की ओर.* नई दिल्ली : मा.सं.वि.मं.

भारत सरकार (1986). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986.* नई दिल्ली : मा.सं.वि.मं.

भोग, दिप्ता (2002). जेण्डर एण्ड करिकुलम. इकोनोमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली. 27 अप्रैल 2002, पृष्ठ 1638–1642.

एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकें

पाठ्यचर्या 2000 पर आधारित हिन्दी की पाठ्यपुस्तकें (कक्षा 9 से लेकर 12 तक)

वासंती, भाग–2 (कक्षा–12, आधार) जनवरी 2003

साहित्य–मंजूषा भाग–2 (कक्षा–12, ऐच्छिक) मार्च 2003

वासंती, भाग–1 (कक्षा–11, आधार) सितम्बर 2002

साहित्य–मंजूषा (कक्षा–11, ऐच्छिक) सितम्बर 2002

साहित्य–मंजरी, भाग–2 (कक्षा–10 'अ') फरवरी 2003

संवाद, भाग–2 (कक्षा–10, द्वितीय भाषा) नवम्बर 2005

साहित्य–मंजरी, भाग–1 (कक्षा–9 'अ') सितम्बर 2002

संवाद, भाग–1 (कक्षा–9, द्वितीय भाषा) सितम्बर 2003

पाठ्यचर्या 2005 पर आधारित हिन्दी की पाठ्यपुस्तकें (कक्षा 9 से लेकर 12 तक)

आरोह, भाग–2 (कक्षा–12, आधार) जनवरी 2007
अंतरा, भाग–2 (कक्षा–12, ऐच्छिक) जनवरी 2007
आरोह, भाग–1 (कक्षा–11, आधार) जनवरी 2006
अंतरा, भाग–1 (कक्षा–11, ऐच्छिक) मार्च 2006
क्षितिज भाग–2 (कक्षा 10 'अ') जनवरी 2007
स्पर्श, भाग–2 (कक्षा–10, द्वितीय भाषा), जनवरी 2007
क्षितिज, भाग–1 (कक्षा–9 'अ'), जनवरी 2006
स्पर्श, भाग–1 (कक्षा–9, द्वितीय भाषा) जनवरी 2006

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

भारतीय युवा शक्ति और रोजगार के अवसर

तरुण कुमार शर्मा*

सारांश

भारत, युवा जनसंख्या में विश्व में प्रथम स्थान रखता है। भारत की राष्ट्रीय युवा नीति 2014 में 15 से 29 वर्ष की आयु वाले व्यक्तियों को युवा के रूप में परिभाषित किया गया है। यूनाइटेड नेशन्स पॉपुलेशन फण्ड की स्टेट ऑफ वर्ल्ड पॉपुलेशन 2014 'दी पावर ऑफ 1.8 बिलियन' रिपोर्ट में कहा गया कि विश्व के 180 करोड़ व्यक्ति 10–24 वर्ष की आयु वर्ग में हैं। इस आयु वर्ग में कुल 35.6 करोड़ व्यक्ति भारत में हैं जो कि भारत की कुल जनसंख्या 126.74 करोड़ का 28 प्रतिशत है। चीन में 10–24 वर्ष आयु वर्ग में 26.9 करोड़ व्यक्ति ही हैं जबकि चीन की कुल जनसंख्या भारत से अधिक है। 10 वर्ष के बच्चों में हर पांच में से एक बच्चा भारत में है। भारत में 10 वर्षीय आयु की 1.2 करोड़ लड़कियां हैं जो विश्व के किसी भी देश की तुलना में सर्वाधिक हैं। भारत के आर्थिक सर्वेक्षण 2015–16 के अनुसार भारत की जनसंख्या में 50 प्रतिशत व्यक्ति 25 वर्ष से कम आयु के हैं। वहीं 65 प्रतिशत जनसंख्या की आयु 35 वर्ष से कम है। वर्ष 2020 तक सर्वाधिक भारतीयों की जनसंख्या औसत आयु वर्ग 29 वर्ष हो जाएगा जबकि इसी समय चीन और जापान की औसत आयु वर्ग 37 वर्ष और 48 वर्ष होगा।

जनाधिक्य युवा के रूप में मिले इस जनांकिकीय लाभांश का भारत को पूर्ण लाभ उठाना है। निश्चित रूप से इस युवा उदीयमान शक्ति को सही दिशा मिलने पर देश प्रगति के पथ की ओर आगे बढ़ेगा। इसके लिये इन युवाओं के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों से हमें निपटना पड़ेगा। बेरोजगारी एक ऐसी ही चुनौती है जो अन्य कई समस्याओं का कारण भी बनती है।

*सहायक आचार्य, मनोविज्ञान विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)
ई-मेल: tarun.udpr@gmail.com

भारतीय युवाओं में बढ़ती बेरोजगारी गहन चिन्तन का विषय है। भारत में बेरोजगारी की समस्या की गहराई को व्यक्त करते कुछ उदाहरण हैं। उत्तरप्रदेश में एमटीएस के 368 पदों के लिए 23 लाख लोगों ने आवेदन किया। 2011 की जनगणना के आधार पर उत्तरप्रदेश की जनसंख्या 21.5 करोड़ है। इस आधार पर उत्तर प्रदेश के हर 93वें व्यक्ति ने इन पदों के लिये आवेदन किया। निर्धारित योग्यता पांचवी पास थी लेकिन आवेदकों में 2.22 लाख इंजीनियर, 255 पी-एच.डी., हजारों कला, विज्ञान, वाणिज्य संकाय स्नातकोत्तर आदि शामिल थे। हालांकि कोई काम छोटा नहीं होता है लेकिन यदि इंजीनियर, पी-एच.डी. योग्यताधारी रखने वाले चपरासी पद हेतु आवेदन करने लगे तो कम योग्यता वाले कहा जाएंगे। इसका एक अर्थ यह भी है कि उच्च डिग्रीधारी युवा अपने शैक्षिक स्तर के अनुरूप रोजगार प्राप्त करने हेतु योग्य नहीं हैं।

इसी तरह पश्चिम बंगाल में ग्रुप डी के 6000 पदों पर भर्ती हेतु 25 लाख आवेदन प्राप्त हुए। इनमें से 1.5 लाख आवेदक स्नातक, लगभग 25 हजार स्नातकोत्तर, 250 पी-एच.डी. योग्यताधारी हैं। देश में ऐसे कई उदाहरण मिल सकते हैं, जहां कम पदों पर इतनी अधिक संख्या में उच्च योग्यता रखने वाले व्यक्तियों से आवेदन प्राप्त हुए हैं।

भारत के युवाओं में बेरोजगारी की इस स्थिति के दो कारण हैं पहला उचित रोजगार के अवसरों का अभाव और रोजगार प्राप्त करने की योग्यता का अभाव। इस लेख में भारतीय युवाओं की बेरोजगारी के इन्हीं मूल कारणों की पड़ताल की गई है।

भारत में बेरोजगारी दर

भारत सरकार के श्रम एवं रोजगार मंत्रालय के लेबर ब्यूरो द्वारा प्रकाशित 2015-16 की एक रिपोर्ट के अनुसार 15 वर्ष से अधिक आयु के कुल रोजगार के लिये उपलब्ध व्यक्तियों में से 5 प्रतिशत व्यक्ति बेरोजगार हैं। इसमें महिलाओं की बेरोजगारी दर 8.7 प्रतिशत जबकि पुरुषों में 4 प्रतिशत है। (तालिका-1) लेकिन यदि 18-29 वर्ष की आयु की बात करें तो यह बेरोजगारी दर 13.2 प्रतिशत है। (यूपीएस आधार पर) जिन व्यक्तियों के पास रोजगार है उनमें से भी 39 प्रतिशत स्व-रोजगार, 36 प्रतिशत केजुअल वर्कर, 19 प्रतिशत वेतन या भत्ते प्राप्त करते हैं जबकि 5.4 प्रतिशत अनुबंध या ठेके पर कार्यरत हैं।

भारत में कुल 77 प्रतिशत घरों में एक भी नियमित वेतन भत्ते प्राप्त करने वाला व्यक्ति नहीं है। ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में ऐसे घरों का प्रतिशत क्रमशः 83.6 प्रतिशत एवं 62 प्रतिशत है। भारत के कुल 67 प्रतिशत घरों की मासिक आय 10 हजार रुपये से कम

है। ग्रामीण क्षेत्रों में 77 प्रतिशत घरों एवं शहरी क्षेत्रों में 45 प्रतिशत घरों में यह स्थिति है। भारत में 48.4 प्रतिशत घरों में कमाने वाला केवल एक व्यक्ति है। एक व्यक्ति की कमाई वाले इन घरों में से 30.4 प्रतिशत घरों में कुल आमदनी 5000 रुपये से भी कम है, जबकि 25.2 प्रतिशत घरों में आमदनी 5000 से 7500 रुपये के मध्य है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार 2017 में भारत में बेरोजगारी दर 3.5 प्रतिशत है।

तालिका-1

ई यू एस 2016 के अनुसार भारत में बेरोजगारी दर (यू पी एस एप्रोच)

क्षेत्र	*पुरुष*	*महिला*	*व्यक्ति*
ग्रामीण	4.2	7.6	5.1
शहरी	3.3	12.1	4.9
ग्रामीण + शहरी	4.0	8.7	5.0

भारत की जनगणना 2011 के अनुसार 15-24 वर्ष के 20 प्रतिशत यानी लगभग 4.7 करोड़ युवा बेरोजगार हैं एवं किसी कार्य की तलाश में हैं। इनमें पूर्ण रूप से बेरोजगारों के साथ वे व्यक्ति भी शामिल हैं जिन्हें वर्ष में 6 महीने से कम रोजगार मिला है। इन 4.7 करोड़ बेरोजगारों में 2.6 करोड़ पुरुष एवं 2.1 करोड़ महिलाएं हैं। रोजगार प्राप्ति के लिये प्रयास कर रहे व्यक्तियों में महिलाओं की पुरुषों के लगभग बराबर संख्या होने से एक भ्रम तो दूर होता है कि युवा महिलाएं पारिवारिक जिम्मेदारी या सामाजिक अस्वीकृति के कारण कार्य नहीं करना चाहती हैं।

शिक्षा एवं रोजगार

सामान्यत: हम यह मानते हैं कि जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ता है, वैसे-वैसे बेरोजगारी कम होती है। श्रम एवं रोजगार मंत्रालय के आंकड़े कुछ और दर्शाते हैं। तालिका-2 से स्पष्ट है कि जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ रहा है, बेरोजगारी का प्रतिशत भी बढ़ रहा है। स्नातक एवं इससे अधिक शैक्षिक योग्यता वाले 18-29 वर्ष के युवाओं में बेरोजगारी दर सर्वाधिक 18.4 प्रतिशत है।

रोजगारपरक शिक्षा की ओर ध्यान देना आवश्यक है। एक महत्वपूर्ण पक्ष तो यह है कि शिक्षा प्राप्त कर रहे युवाओं का प्रतिशत बढ़ाया जाय। इसके लिये वे व्यक्ति जो शैक्षिक तंत्र में प्रवेश से वंचित रहते हैं, उन्हें स्कूल, कॉलेज तक लाया जाए। लेकिन दूसरा उतना ही महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि जो विद्यार्थी इस शैक्षिक तंत्र में प्रवेश कर

चुके हैं, उनमें वांछित योग्यताओं, ज्ञान, कौशल का विकास किया जाए। ऐसा होने पर ही शैक्षिक संस्थानों के आउटपुट एवं कार्यस्थलों द्वारा वांछित इनपुट के मध्य पड़ी खाई को पाटा जा सकेगा। ऐसा नहीं होने पर जो विद्यार्थी शैक्षिक तंत्र से निकलते हैं, उनमें रोजगार योग्यता या नियोज्यता का अभाव होता है।

तालिका-2

श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार की एम्प्लायमेंट-अनएम्प्लायमेंट सर्वे रिपोर्ट वॉल्यूम-2 2015-16 के आधार पर 18-29 वर्ष आयु वर्ग के व्यक्तियों के लिये शैक्षिक योग्यता के अनुसार आंकड़े (प्रतिशत में)

शैक्षिक योग्यता	*रोजगार प्राप्त व्यक्ति*	*बेरोजगार व्यक्ति*	*लेबर फोर्स से बाहर व्यक्ति***
अशिक्षित	43	2.2	54.8
प्राथमिक शिक्षा से कम	46.7	2.5	50.8
प्राथमिक शिक्षा	47.2	3.1	49.8
माध्यमिक/मीडिल/उच्च माध्यमिक	28.3	3.3	68.4
अधिस्नातक स्तर प्रमाण पत्र	29.3	9.0	61.7
स्नातक स्तर का डिप्लोमा	35.1	10.5	54.4
स्नातक एवं इससे अधिक	34.5	18.4	47.1

****** लेबर फोर्स से बाहर व्यक्तियों से अभिप्राय उन लोगों से है जो रोजगार की तलाश में नहीं हैं। इस श्रेणी में विद्यार्थी, घरेलू कार्य में लगे व्यक्ति, अक्षम व्यक्ति आदि आते है।

अस्थायी, अंशकालीन रोजगार

भारत में 90 प्रतिशत रोजगार अनौपचारिक क्षेत्र में हैं। अनौपचारिक क्षेत्र के रोजगार अंशकालीन, अस्थायी होते हैं। इस क्षेत्र में रोजगार कर रहे व्यक्तियों में अपने रोजगार की सुरक्षा सम्बन्धी चिन्ता रहती है। भारत में रोजगार प्राप्त कर रहे व्यक्तियों में ऐसे लचीले (वल्नरेबल) रोजगार वालों का प्रतिशत अधिक है। ऐसे रोजगार की कई समस्याएं हैं जैसे– अपर्याप्त आय, अस्थायित्व, निम्न उत्पादकता, कार्य की कठिन परिस्थितियां जिनमें वर्कर के मूल अधिकारों की रक्षा नहीं होती। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में हर 4 में से 3 व्यक्ति इस प्रकार के रोजगार में है।

रोजगार हेतु प्रवास

देश के मानव संसाधन का बाहर जाने का सबसे बड़ा कारण उचित रोजगार का अभाव ही है। यह भी दर्शाता है कि देश में उचित रोजगार के अवसरों की कमी है। प्रवासी भारतीयों की संख्या विश्व के किसी भी देश के प्रवासियों की तुलना में सर्वाधिक है। यूनाइटेड नेशन्स के डिपार्टमेंट ऑफ इकोनोमिक्स एण्ड सोश्यल अफेयर्स (डेसा) द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास रिपोर्ट 2015 के अनुसार भारत के 1.6 करोड़ प्रवासी भारतीय हैं। 1990 में यही संख्या 67 लाख थी। वहीं दूसरी ओर अन्य देशों से भारत में आकर निवास करने वाले व्यक्तियों की संख्या में कमी हुई है। 1990 में यह संख्या 75 लाख थी जो 2015 में घटकर 52 लाख रह गई है।

बेरोजगारी एक वैश्विक समस्या

ऐसा नहीं है कि बेरोजगारी की समस्या भारत जैसे विकासशील देशों में ही है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) की ग्लोबल एम्प्लायमेंट ट्रेंड्स फॉर यूथ 2015 रिपोर्ट के अनुसार कुछ विकसित देशों में भी बेरोजगारी एक प्रमुख समस्या है। विश्व के 13 प्रतिशत युवा बेरोजगार हैं। (तालिका-3)। कई निम्न एवं मध्यम आय वाले देशों में असंगठित या अनौपचारिक क्षेत्र मुख्य रोजगार प्रदाता के रूप में युवाओं को निम्न रोजगार या आंशिक रूप से रोजगार सुलभ करा पाया है।

तालिका-3

भारत एवं कुछ अन्य देशों की बेरोजगारी दर एवं बेरोजगारों की संख्या, आईएलओ शोध विभाग द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट नवम्बर 2015 (प्रोजेक्टेड आंकड़े)

	बेरोजगारी दर (प्रतिशत में)			बेरोजगारों की संख्या (करोड़ में)		
	2015	2016	2017	2015	2016	2017
विश्व	5.8	5.8	5.7	19.71	19.94	20.05
भारत	3.5	3.4	3.4	1.75	1.75	1.76
चीन	4.6	4.7	4.7	3.73	3.77	3.81
अमरीका	5.3	4.9	4.7	0.87	0.79	0.77
कनाडा	6.9	6.8	6.8	0.14	0.14	0.14
यूके	5.5	5.5	5.5	0.18	0.18	0.19

विश्व में 16.9 करोड़ लोग 2 अमेरिकन डॉलर यानी 120 से 140 रुपये प्रतिदिन से भी कम आय पर काम कर रहे हैं। जबकि 28.6 करोड़ लोग 4 अमेरिकन डॉलर यानी 240–380 रुपये प्रतिदिन से भी कम आय पर काम कर रहे हैं। आईएलओ के अनुसार बेरोजगार युवाओं को रोजगार दिलाने हेतु अगले दशक में अनुमानित लगभग 60 करोड़ रोजगार के अवसरों का सृजन करना होगा। प्रतिवर्ष 4 करोड़ से भी अधिक लोग श्रम बाजार में रोजगार के अवसरों की तलाश में जुड़ रहे हैं।

बेकार युवा वर्ग

भारत में ही नहीं वैश्विक स्तर युवाओं की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग ऐसा है जो न तो शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, न रोजगार में हैं और न ही किसी प्रकार का प्रशिक्षण ले रहे हैं। इस श्रेणी को नॉट एन एम्प्लायमेंट एजुकेशन ट्रेनिंग (एन.ई.ई.टी. – नीट) के नाम से जाना जाता है। भारत के आर्थिक सर्वेक्षण 2017 के अनुसार भारत में 15–29 वर्ष आयु वर्ग के 30 प्रतिशत से भी अधिक युवा ऐसे है जो नीट श्रेणी में आते है। यह प्रतिशत चीन के नीट प्रतिशत से तीन गुना अधिक है। यह स्थिति चिन्ताजनक है। किसी भी देश की जनसंख्या का युवा जनाधिक्य लाभांश तब तक प्राप्त नहीं हो सकता है, जब तक कि इन युवाओं को देश के विकास में सहभागी नहीं बनाया जाए। ऐसे अधिकतर युवा या तो बेरोजगार रहते हैं या उन्हें आंशिक, अस्थायी रूप से कम समय, कम वेतन पर अनौपचारिक क्षेत्र में काम करना पड़ता है। बेरोजगारी का एक रूप निम्नरोजगारी या अण्डरएम्प्लॉयमेंट भी है। भारत में युवाओं के लिये रोजगारों का सृजन तो करना ही है, लेकिन ये अवसर ऐसे हो जिसमें युवाओं की क्षमताओं का पूर्ण उपयोग हो सके। इसके लिये इन अवसरों की गुणवत्ता पर भी उचित ध्यान आवश्यक है। पार्ट टाइम रोजगार, अकुशल कार्य, अस्थायी या आंशिक रोजगार द्वारा युवाओं की क्षमताओं का पूर्ण दोहन संभव नहीं है। उन्हें प्रशिक्षण द्वारा पूर्ण अवधि के लिये उनकी क्षमतानुसार रोजगार दिलाना आवश्यक है तभी यह युवा जनाधिक्य देश के लिये लाभकारी साबित होगा। रोजगार सृजन का देश की अर्थव्यवस्था से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध होता है। भारत में रोजगार सृजन हेतु उद्यमिता एवं कौशल विकास को एक विकल्प के रूप में बढ़ावा देना आवश्यक है।

भर्ती एवं नियुक्ति प्रक्रिया में अवरोध

कई राज्यों में रोजगार प्रदान करते हेतु भर्ती परीक्षाओं में अनेक अवरोध आते हैं। इस दौरान भी युवाओं को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। शिक्षक भर्ती परीक्षाओं का उदाहरण लें तो स्नातक उपाधिधारी विद्यार्थी पहले तो प्रवेश परीक्षा के

माध्यम से शिक्षा स्नातक (बी.एड.) में प्रवेश लेता है। अब दो वर्षों की अवधि में बी.एड. की परीक्षाएं पास करता है। इसके बाद भी टीचर इलिजिबिलिटी टेस्ट (टेट) एवं शिक्षक भर्ती परीक्षा के लिये कड़ी प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है। सफल अभ्यर्थियों का प्रतिशत बहुत कम होता है। विद्यार्थी कोचिंग सेंटरों पर मनमानी फीस देकर अध्ययन करते हैं। इसमें तीन चार साल या कभी-कभी इससे भी अधिक समय लग जाते हैं। भर्ती प्रक्रिया में कई अवरोध आते रहते हैं। परीक्षाएं टलती जाती हैं। परिणामों की घोषणा में लगा समय, कोर्ट में प्रक्रिया का अटकना आदि कई चुनौतियां होती हैं। युवाओं के महत्वपूर्ण उत्पादक उर्जावान वर्ष तनाव एवं कुण्ठा में चले जाते हैं। बेरोजगारी की स्थिति में एक शिक्षित व्यक्ति निजी क्षेत्र के विद्यालयों, महाविद्यालयों, उद्यमों में मजबूरी में न्यूनतम मजदूरी से भी कम वेतन पर कार्य करने को विवश होता है। मासिक वेतन यदि 4500-5000 रुपये हो तो स्वयं एवं परिवार का भरण-पोषण करने में कितनी दिक्कतें आती होंगी, समझा जा सकता है।

यहां बेरोजगारी के आंकड़ों तथा उदाहरणों को समझने के बाद अगर सब कुछ नीति निर्माताओं, सरकार पर ही डाल दिया जाए तो यह उचित नहीं होगा। युवा वर्ग की रोजगार हेतु योग्यता एक और पहलू है जिस पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। कई बार निजी कार्पोरेट क्षेत्रों में रोजगार के अवसर होते हुए भी उन्हें योग्य व्यक्ति नहीं मिलते हैं। इसका कारण युवाओं में नियोजनीयता का अभाव है।

नियोजनीयता (एम्प्लॉयबिलिटी)

नई दिल्ली की एस्पायरिंग माइंड्स कम्पनी द्वारा 2013 में डेढ़ लाख इंजीनियरिंग विद्यार्थियों पर किये गए शोध से प्राप्त निष्कर्षों पर आधारित नेशनल एम्प्लॉयबिलिटी रिपोर्ट प्रकाशित की गई। इसके अनुसार देश के केवल 7 प्रतिशत इंजीनियर्स ही इंजीनियरिंग क्षेत्र में कार्य करने हेतु योग्य पाए गए। इसमें भी शहरों के स्तर के आधार पर परिणामों में भिन्नता देखने को मिली। स्तर-1 के शहरों जैसे मुम्बई, बैंगलोर, हैदराबाद आदि में 18.26 प्रतिशत एवं स्तर-2 शहरों जैसे पुणे, नागपुर, सूरत आदि में 14.17 प्रतिशत इंजीनियर कार्य हेतु योग्य हैं। स्तर-3 के अन्य छोटे शहरों में यह प्रतिशत सबसे कम था।

एसोसिएटेड चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज इन इण्डिया (एसोचेम) द्वारा किये गये अध्ययन में एमबीए योग्यताधारी प्रबन्ध स्नातकों की रोजगार योग्यता दर 7 प्रतिशत पाई गई। एसोचेम के अनुसार भारत में 5500 से भी अधिक बिजनेस स्कूल हैं। आईआईएम और शीर्ष बिजनेस संस्थानों को छोड़ दिया जाए तो अन्य संस्थानों से निकले

एमबीए योग्यताधारियों को कम वेतन पर काम करना पड़ रहा है क्योंकि उनमें वांछित नियोजनीयता का अभाव है।

भारतीय युवाओं की रोजगार हेतु योग्यता चिन्तन का विषय है। भारत से प्रतिवर्ष लाखों विद्यार्थी विविध विषयों, संकायों में स्नातक, स्नातकोत्तर, डॉक्टर, इंजीनियर, प्रबंध स्नातक आदि उपाधियां प्राप्त करते हैं। रोजगार प्रदाता कम्पनियों द्वारा आकलन किये जाने पर इनमें वांछित ज्ञान, कौशल का अभाव पाया जाता है। अर्थात इनमें रोजगार प्राप्त करने की योग्यता या नियोजनीयता (एम्प्लॉयबिलिटी) नहीं होती है।

नियोजनीयता का अर्थ

नियोजनीयता को किसी व्यक्ति द्वारा चुने गए क्षेत्र में रोजगार प्राप्त करने की सक्षमता या योग्यता के रूप में समझा जा सकता है। वहीं नियोजनीयता का व्यापक अर्थ किसी व्यक्ति के रोजगार प्राप्त करने, उसे बनाए रखने, उसमें सफलता प्राप्त करने की योग्यता है जो व्यक्ति को स्वयं के साथ-साथ समाज एवं राष्ट्र के विकास में भागीदार बनाती है। नियोजनीयता के अन्तर्गत विद्यार्थी की मौखिक-लिखित सम्प्रेषण कौशल, समय प्रबंधन, स्व-अभिप्रेरणा, समूह में प्रभावी भूमिका निभाने की क्षमता, अन्तर्वेयक्तिक कौशल, मूलभूत आंकिक एवं तार्किक क्षमता, स्व-प्रबंधन, अनवरत सीखने की योग्यता एवं अभिवृत्ति एवं परिस्थितियों के प्रति समायोजित होने की क्षमता आदि शामिल किये जाते हैं। कुछ ज्ञान, कौशल ऐसे होते हैं जो सभी रोजगारों के लिये आवश्यक होते हैं एवं कुछ कौशल विशिष्ट रोजगार हेतु ही आवश्यक होते हैं।

वर्तमान में उद्योग जगत द्वारा नियोजनीयता को अधिक महत्व दिया जा रहा है। इसका कारण श्रम बाजार का अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक होना है। रोजगार प्रदाता कम्पनियां उन्हीं व्यक्तियों को चुनना चाहती हैं जो किसी कार्य को पूर्ण करने में पहले से ही सक्षम हों ताकि कम्पनियों को उनके प्रशिक्षण पर अधिक समय, धन खर्च नहीं करना पड़े। ऐसे व्यक्ति चुने जाते हैं जिनमें कार्य के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति, परिस्थितियों के प्रति ढलने के लचीलेपन का रुख अपनाने की प्रवृत्ति हो, जो कार्य में स्वयं आगे बढ़कर भागीदारी करें।

शिक्षा तंत्र की मजबूती अत्यावश्यक

विद्यार्थियों को रोजगार प्राप्त करने योग्य बनाना शिक्षण संस्थाओं का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है। ऑल इण्डिया सर्वे ऑन हायर एजुकेशन 2014-15 के अनुसार उस समय लगभग 3 करोड़ 42 लाख विद्यार्थी उच्च शिक्षा तंत्र में पंजीकृत थे। इसमें से सर्वाधिक

79 प्रतिशत यानी 2 करोड़ 71 लाख तो स्नातक या अण्डरग्रेजुएट स्तर पर ही अध्ययनरत थे। 38 लाख स्नातकोत्तर स्तर पर अध्ययनरत थे। अर्थात भारत की युवाशक्ति का एक बहुत बड़ा भाग उच्च शिक्षा तंत्र से जुड़ा हुआ है। देश के शिक्षा तंत्र के पास गुणवत्तापूर्ण शिक्षा द्वारा युवा शक्ति को नियोजनीय बनाने की महती जिम्मेदारी है। वे विद्यार्थी में आवश्यक योग्यताओं, चिन्तन, विश्लेषण एवं अनुप्रयोग करने की क्षमताओं आदि का विकास करें। यदि किसी विश्वविद्यालय, महाविद्यालय या संस्थान की नियोजनीयता अधिक होगी तो वहां पर भविष्य में भी उच्च गुणवत्ता वाले विद्यार्थी अध्ययन के लिये आकर्षित होंगे। साथ ही रोजगार प्रदाता उद्योग भी ऐसे ही संस्थानों में कैम्पस साक्षात्कार संचालित करेंगे।

तकनीकी कारणों, नीतिगत परिवर्तनों, प्रतिस्पर्धात्मक बाजार, व्यावसायिक परिवेश आदि के कारण कार्य की प्रकृति में समय-समय पर परिवर्तन होते रहते हैं जो एक बार सीख लिया है और आज काम आ रहा है, हो सकता है कल उसे भूलकर नई तकनीकें, ज्ञान, कौशल की आवश्यकता पड़े। इसीलिये रोजगार प्रदाता कम्पनियां ऐसे व्यक्तियों को कार्य पर रखती हैं जिनमें सतत रूप से सीखने की क्षमता हो, जो भविष्य में आने वाले परिवर्तनों के प्रति सकारात्मक अभिवृति रखते हुए संगठन की सफलता में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करा सकें।

नियोजनीयता एवं बेरोजगारी के कई कारण हैं। वर्तमान शिक्षा तंत्र उद्योग स्तर पर वांछित ज्ञान, कौशल, तकनीकी विशेषज्ञता की पूर्ति करने में सक्षम नहीं हो पा रहा है। शिक्षा के नाम पर विद्यार्थी डिग्री/डिप्लोमा तो प्राप्त कर रहे हैं पर उनमें रोजगार योग्यता या नियोजनीयता का अभाव है।

शैक्षिक तंत्र की आधारभूत संरचना

सैम पित्रोदा की अध्यक्षता में बने ज्ञान आयोग ने रिपोर्ट दी थी कि देश में योग्य भारतीय युवाओं को उच्च शिक्षा प्रदान कराने के लिये वर्ष 2015 तक 1500 से भी अधिक विश्वविद्यालयों की आवश्यकता होगी। वर्तमान में देश में लगभग 800 विश्वविद्यालय एवं लगभग 40 हजार महाविद्यालय हैं फिर भी उच्च शिक्षा में मात्रात्मक एवं गुणात्मक कमियां हैं। नये संस्थानों, विश्वविद्यालयों की स्वीकृति के समय उचित कार्ययोजना, दिशानिर्देशों एवं निरीक्षण की आवश्यकता है।

कई संस्थाएं और विश्वविद्यालय शैक्षिक, शोध एवं अकादमिक गुणवत्ता के स्थान पर केवल लाभ कमाने वाले केन्द्र के रूप में कार्य कर रहे हैं। यहां तक कि सरकारी

विश्वविद्यालय भी राजनीतिक केन्द्र बनते जा रहे हैं। शिक्षण संस्थाओं में योग्य शिक्षकों की गुणात्मक व संख्यात्मक कमी, पाठ्यक्रम में नवीनता न होना, शिक्षण में सिद्धान्तों के वास्तविक जीवन में अनुप्रयोग पर ध्यान नहीं दिया जाना, कौशल विकास की कमी आदि की अनेक समस्याएं हैं। जहां एक ओर विज्ञान एवं तकनीकी में तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं, वहीं दूसरी ओर पाठ्यक्रम में इसका समावेश नहीं हो रहा है।

शिक्षा में नवाचार

शिक्षा पारम्परिक तरीकों से सूचना केन्द्रित शिक्षण के माध्यम से प्रदान की जा रही है। अधिकतर परीक्षाएं एवं मूल्यांकन कार्य भी सूचना संग्रहण को ही जांच रहे हैं। सूचना एवं ज्ञान में अन्तर है। सूचनाएं तो कम्प्यूटर की एक क्लिक पर ढेरों उपलब्ध हैं। महत्वपूर्ण है विद्यार्थी में अनुप्रयोग, विश्लेषण क्षमता, तर्कपूर्ण चिन्तन, सृजनात्मकता आदि गुणों का विकास करना। चिन्तन की प्रक्रिया को जितना विस्तार मिलेगा, उतना ही विद्यार्थी में नये विचार उत्पन्न होंगे। ऐसा नहीं है कि समस्याएं केवल उच्च शिक्षा तंत्र में ही है, प्राथमिक, माध्यमिक स्तर पर भी ऐसी व अन्य तरह की समस्याएं हैं। गुणवत्ताविहीन प्राथमिक शिक्षा के बारे में एनसीईआरटी एवं प्रथम द्वारा दी गई रिपोर्ट में भी बताया गया है।

कौशल विकास : महत्ती आवश्यकता

बेरोजगारी से निपटना वैश्विक स्तर पर सभी सरकारों की प्राथमिकता है। भारत सरकारों ने इससे निपटने के लिऐ कई उपाय किये है। वर्तमान में कौशल विकास एवं प्रशिक्षण पर जोर दिया जा रहा है। नीति निर्माताओं का यह भी प्रयास रहा है कि युवा स्वयं का व्यवसाय प्रारम्भ कर उद्यमी बने। स्टार्ट अप इंडिया, स्टैंड अप इंडिया, मेक इन इण्डिया, स्किल इण्डिया जैसी कई योजनाओं के माध्यम से युवा उद्यमिता को बढ़ावा देने के प्रयास हो रहे हैं। भारत की राष्टीय कौशल विकास नीति प्रशिक्षण की गुणवत्ता, व्यावसायिक प्रशिक्षण की संख्यात्मकता एवं गुणात्मकता, सभी क्षेत्रों, वर्गों तक पहुंच आदि को ध्यान में रखकर बनाई गई है। भारत सरकार कौशल विकास के लिये वर्ष 2022 तक 50 करोड़ व्यक्तियों को कौशल विकास प्रशिक्षण प्रदान करने का वशहत निर्धारित कर चुकी है। इसके ठोस, प्रभावी व ईमानदार क्रियान्वयन होने पर निश्चय ही आशातीत सफलता प्राप्त होगी लेकिन इन कार्यक्रमों के जमीनी स्तर पर संचालन की गुणवत्ता को जांचने की आवश्यकता है। 12वीं पंचवर्षीय योजना में 2022 तक 10 करोड़ रोजगार के अवसरों के सृजन का भी लक्ष्य रखा गया है। वर्तमान में बाजार में श्रम की मांग को समझने का संगठित तंत्र विकसित नहीं है जिससे कि बाजार मांग के अनुसार श्रम की पूर्ति करना संभव नहीं हो पाता है। ऐसे व्यवस्थित मापन तंत्र बनाने आवश्यक है।

देश की अर्थव्यवस्था की मजबूती का भी रोजगार सृजन से संबंध है। अर्थव्यवस्था की मजबूती से कम्पनियां नवनियुक्तों के प्रशिक्षण पर खर्च कर सकेंगी। ऐसा नहीं होने पर कम्पनियों की प्राथमिकता रहेगी कि ऐसे अभ्यर्थियों का ही चयन हो जो पूर्वप्रशिक्षित या नियोजनीय हों।

कोई भी पौधा तब ही फलफूल कर वृक्ष बनता है जब उसे पनपने के लिए वांछित वातावरण, उर्वरा मिट्टी, पर्याप्त जल, प्रकाश आदि मिले। देश की उदीयमान युवा शक्ति इन्हीं पौधों के समान हैं जिन्हें उचित वातावरण, अवसर, संसाधन उपलब्ध कराने पर ही यह एक उत्पादक शक्ति के रूप में देश के विकास में योगदान दे सकेंगे। ऐसा नहीं होने पर देश का युवा जनाधिक्य लाभांश पूर्ण रूप से प्राप्त होने में संशय है।

युवाओं की बेरोजगारी की समस्या को हल करने के लिये सरकार को भी रोजगार के अवसरों को बढ़ाना होगा लेकिन साथ ही युवाओं को रोजगार प्राप्त करने योग्य, कुशल बनाने हेतु सभी संबंधित तंत्रों जैसे– शैक्षिक, प्रशिक्षण, प्रशासकीय तंत्र को भी जमीनी स्तर पर मनोयोग से कार्य करना होगा। युवा वर्ग भी अपने भविष्य निर्माण में स्वयं की जिम्मेदारी समझें एवं मेहनत, लगन से स्वयं, समाज एवं राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान दें।

संदर्भ

यूनाइटेड नेशन्स पॉपुलेशन फण्ड (2014), *दी पावर ऑफ 1.8 बिलियन, यूएनएफपीए स्टेट ऑफ वर्ल्ड पॉपुलेशन* 2014 रिपोर्ट

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (2017), *इकोनॉमिक सर्वे ऑफ इण्डिया, मिनिस्ट्री ऑफ फाइनेंस,* नई दिल्ली

दि हिन्दू, 17 सितम्बर 2015

दि टाइम्स ऑफ इण्डिया 30 जनवरी 2017

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (2016) *फिफ्थ एम्प्लायमेंट अनएम्प्लायमेंट सर्वे रिपोर्ट 2015-16* वॉल्यूम-1, पृष्ठ 17-21 लेबर ब्यूरो, मिनिस्ट्री ऑफ लेबर एण्ड एम्प्लॉयमेंट, नई दिल्ली

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (2016) *फिफ्थ एम्प्लायमेंट अनएम्प्लायमेंट सर्वे रिपोर्ट 2015-16* वॉल्यूम-2, लेबर ब्यूरो, मिनिस्ट्री ऑफ लेबर एण्ड एम्प्लॉयमेंट, नई दिल्ली

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (2018) *वर्ल्ड एम्प्लायमेंट सोश्यल आउटलुक ट्रेंड्स 2018,* पृष्ठ 21, इण्टरनेशनल लेबर ऑफिस, जेनेवा

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (2011), *सेन्सस ऑफ इण्डिया,* ऑफिस ऑफ दी रजिस्ट्रार जनरल एण्ड सेन्सस कमिश्नर, मिनिस्ट्री ऑफ होम अफेयर्स, नई दिल्ली

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (2016) *फिफ्थ एम्प्लायमेंट अनएम्प्लायमेंट सर्वे रिपोर्ट 2015-16* वॉल्यूम-2, लेबर ब्यूरो, मिनिस्ट्री ऑफ लेबर एण्ड एम्प्लॉयमेंट, नई दिल्ली

बिजनेस टुडे (2018) *3 आउट ऑफ 4 वर्कर्स इन इण्डिया फॉल इन वल्नरेबल एम्प्लायमेंट,* बिजनेस टुडे, जनवरी 2018

यूनाइटेड नेशन्स (2016) *इण्टरनेशनल माइग्रेशन रिपोर्ट 2015*, डिपार्टमेंट ऑफ इकोनॉमिक एण्ड सोश्यल अफेयर्स, यूएन

आईएलओ (2015) *ग्लोबल एम्प्लॉयमेंट्स ट्रेंड्स फॉर यूथ 2015*, आईएलओ स्कूल टू वर्क ट्रांजिशन सर्वे, इण्टरनेशनल लेबर आर्गेनाइजेशन, जेनेवा

गवर्मेंट ऑफ इण्डिया (2017), *यूथ इन इण्डिया 2017*, सीएसओ, मिनिस्ट्री ऑफ स्टेटिसटिक्स एण्ड प्रोग्राम इम्प्लीमेंटेशन, सोश्यल स्टेटिसटिक्स डिवीजन, दिल्ली

एस्पायरिंग माइंड्स (2016), *नेशनल एम्प्लॉयबिलिटी रिपोर्ट फॉर इंजीनियर्स,* नई दिल्ली

एसोचेम 2016, *बी एण्ड सी केटेगरी बी-स्कूल्स प्रोड्यूसिंग अनएम्प्लायबल पासआउट्स,* एसोसिएशन ऑफ चेम्बर्स ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज, एसोचेम.ओआरजी/न्यूजडिटेल/पीएचपी?आईडी=5651 एक्सेस्ड ऑन 14 मई 2017

गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया (2016), *ऑल इण्डिया सर्वे ऑन हायर एज्युकेशन 2015-16*, मिनिस्ट्री ऑफ ह्युमन रिसोर्स डवलपमेंट, नई दिल्ली

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

शोध टिप्पणी/संवाद

शिक्षा अभियानों की आलोचनात्मक समीक्षा

कौशलेन्द्र प्रपन्न*

प्रस्तुत लेख में शिक्षा के प्रति गंभीरता और कारगर रणनीतिगत प्रयास को ध्यान में रखते हुए इस पर प्रकाश डालता है कि शिक्षा के नाम पर और शिक्षा के लक्ष्य (सबके लिए शिक्षा, 1990 सेनेगल सम्मेलन, ईएफए 1990) के निर्धारण के साथ ही लक्ष्य हासिल करने के लिए किस प्रकार की प्रतिबद्धता और रणनीति की आवश्यकता है। आलेख में चर्चा की गई है कि शिक्षा-नीति निर्माण 1968, 1976, 1986, 1990-92 पुनरीक्षा समिति, पाठ्यक्रम निर्माण एवं पाठ्यपुस्तक निर्धारण में होने वाली तबदीलियों को कैसे स्वस्थ शैक्षिक विमर्श का हिस्सा बनाया जाए ताकि हमारा बच्चा शिक्षा के वृहत उद्देश्यों से जुड़ सके और शिक्षा की मुख्य धारा का अभिन्न अंग बन सके। 1990 में सेनेगल के 'सभी के लिए शिक्षा', 'एजुकेशन फार ऑल' से लेकर वर्तमान सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य 2000 एवं सतत्विकास लक्ष्य 2015-16 में दर्ज 2030 तक के शैक्षिक लक्ष्य की भी यात्रा इस आलेख में की गई है।

स्वच्छता की परिकल्पना अनूठा और नया है। यदि समाज के साथ इसे शिक्षा में भी लागू किए जाए तो यह सकारात्मक परिणाम दे सकती है। मसलन शिक्षा में, शिक्षा के नाम पर, शिक्षा के लिए आदि नामों से शैक्षिक परिदृश्य को बेहतर और परिणामदायी बनाने के लिए जिस प्रकार की कवायदें हो रही हैं उसे देखते हुए कई बार महसूस होता है कि शिक्षा को बच्चों की पहुंच में लाने के लिए तथाकथित प्रयासों और नीतियों की साफ-सफाई होनी चाहिए। कभी वक़्त था जब हम शिक्षा को कुछ खास दक्षताओं तक ही महदूद कर दिया करते थे। मसलन बच्चा भाषा में पढ़ना-लिखना जानता है या नहीं। वहीं गणित में बच्चा सामान्य जोड़-घटा कर पाता है या नहीं। मगर समय के साथ शिक्षा

*शिक्षा एवं भाषा शिक्षणशास्त्र विशेषज्ञ, नई दिल्ली

और शैक्षिक दरकार बदले हैं और बदलने भी चाहिए। 1990 में सेनेगल में हुए ''सबके लिए शिक्षा'' यानी ''एजुकेशन फॉर ऑल'' और उसके बाद 2000 में डकार में पुनः मिले कि क्या हमने उन लक्ष्यों को हासिल कर लिया, जिसको हमने सेनेगल में स्वीकार किया था। इस सम्मेलन में तय शैक्षिक लक्ष्यों (गुणवत्तापूर्ण, समान शिक्षा, लैंगिक स्तर पर समान बिना किसी भेदभाव के समतामूलक शिक्षा सभी बच्चों को मुहैया करा सकेंगे) को हासिल करना है तो हमें शिक्षा के आंगन में साफ-सफाई यानी स्वच्छता अभियान चलाने की आवश्यकता है। वह कई स्तरों पर देखी और समझी जा सकती हैं। मसलन शैक्षिक नीति-निर्माण, पाठ्यपुस्तक निर्माण, पाठ्यक्रम निर्माण आदि। (1952 का माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1964-66 का कोठारी आयोग, 1976 का राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 1986 का राष्ट्रीय शिक्षानीति, 1990-92 का आचार्य रामामूर्ति पुनरीक्षा समिति, 2000 की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा एवं 2005 की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा आदि)। यह स्पष्ट तौर पर महसूस किया गया है कि जब भी सत्ता में सरकारें आई हैं तब सबसे पहले शिक्षा को अपने कब्जे में करने की कोशिश की गई है। किन्तु इस तथ्य से हम मुंह नहीं फेर सकते कि इन बदलावों का खामियाजा कहीं न कहीं बच्चों एवं शिक्षकों को बाद में भुगतना पड़ा हैं। गौरतलब है कि 2000 में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा पर आरोप लगे कि यह कहीं न कहीं शिक्षा को भगवाकरण की ओर धकेलना है। हालांकि इसके पक्ष और विपक्ष में तर्क रखे गए। देखना यह भी है कि 2005 में आई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा को अकादमिक धड़ों में खासी प्रशंसा हासिल हुई। इस पाठ्यचर्या को ये श्रेय मयस्सर हुआ कि कम-से-कम यह दस्तावेज सृजनात्मकता, भाषा-कौशल, तर्कपूर्ण वैचारिक मंथन को प्रश्रय देता है। इसी दस्तावेज़ को आधार बनाकर पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया गया।

किसी को भी यह स्वीकारने में कोई गुरेज नहीं है कि शिक्षा से हमारा मकसद बच्चों का सर्वांगीण विकास करना ही लक्ष्य है। जो बच्चे स्कूल से बाहर हैं उन्हें स्कूल की परिधि में लाना और कम से कम बुनियादी प्राथमिक शिक्षा तो मुहैया करा दें, (शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 और 1990 में ईएफए की मुख्य स्थापना थी कि बच्चों को कक्षा 1 से 8वीं तक की मुफ्त शिक्षा) इसके प्रति प्रयास करना चाहिए। वहीं हमने 2002 में भारतीय संविधान में संशोधन कर मौलिक अधिकार में धारा 21 में (अ) तोड़कर निःशुल्क एवं अनिवार्य बुनियादी शिक्षा का अधिकार जोड़ा। यह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर की गई घोषणाओं को अमली जामा पहनाने की ओर सकारात्मक कदम माना गया। यदि आंकड़ों की मानें तो मुसलिम समुदाय और अनुसूचित जनजाति के बच्चों का

अनुपात अन्य समुदायों के बच्चों से स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की संख्या में ज्यादा है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा जारी 2016 की रिपोर्ट में वर्ष 2013–14 के आंकड़े बताते हैं कि स्कूल छोड़ने वाले कुल बच्चों की संख्या 4.34 फीसदी है। लड़कों की संख्या 4.53 और लड़कियों की संख्या 4.14 है। यदि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की बात करें तो यह आंकड़ा चौकाने वाला तो है ही साथ ही हम नागर समाज पर सवाल भी खड़ा करता है। अनुसूचित जनजाति में कुल 7.98 फीसदी बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं। असर की 2016 की रिपोर्ट की मानें तो देशभर में 11 से 14 आयु वर्ग के बच्चों का स्कूल छोड़ने का आंकड़ा 3.5 फीसदी है। (विस्तार से जानने के लिए देखें तालिका–2)

स्वच्छता अभियान की जरूरत शिक्षा में भी शिद्दत से महसूस की जा रही है। वैचारिक हो या फिर व्यवस्थागत इन सबकी जड़ में कहीं न कहीं शिक्षा भी सवालों के घेरे में आती है। हम कैसी शिक्षा दे रहे हैं, कौन शिक्षा प्रदाता है, कैसे शिक्षा को कक्षा व कक्षा के बाहर हस्तांतरित किया जा रहा है आदि सवालों का जवाब हमें देना ही होगा। यदि हम नागर समाज अपनी जिम्मेदारी लें तो हम इस भूमिका से बाहर कभी नहीं हो सकते। आजादी से पहले और आजादी के बहत्तर साल बाद भी कुछ ऐसी गंदगी है जिसे हमने नजरअंदाज किया है।

स्कूली बुनियादी ढ़ांचा एक नजर में

स्कूल की बुनियादी जरूरतों में शामिल भवन, पीने का पानी, शौचालय, कक्षा–कक्ष आदि की ओर आरटीई एक्ट के साथ ही कोठारी आयोग ने भी अपने सुझाव सरकार को तब दिए थे। लेकिन हकीकत में स्थितियां उतनी सकारात्मक नज़र नहीं आती। फिर भी स्कूलों पर नजर दौड़ाएं तो पाएंगे कि एक ओर 99.01 फीसदी स्कूलों में भवन बन चुके हैं किन्तु मसला यह है कि इन स्कूलों में भवन तो मौजूद हैं किन्तु उनका इस्तेमाल किन्हीं कारणों से नहीं हो पा रहा है। इन सरकारी स्कूलों के भवन और खेल के मैदान आदि को लेकर अन्य कई तरह की दिक्कतें हैं। एक ओर स्कूलों में पीने का स्वच्छ पानी आंकड़ों में दिखाई देती हैं किन्तु हकीकत में 86.96 फीसदी ही पीने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। जहां तक स्कूलों में शौचालय का मामला है तो एक ओर लड़कों और लड़कियों के लिए अलग से बन तो गए हैं। जैसे शौचालय आंकड़ों में 96.93 फीसदी दिखाई देते हैं, लेकिन जमीनी हकीकत यह है कि उनमें से 92.58 ही इस्तेमाल के योग्य हैं। बाकी के शौचालय या तो बंद पड़े हैं या फिर वहां पर पानी की

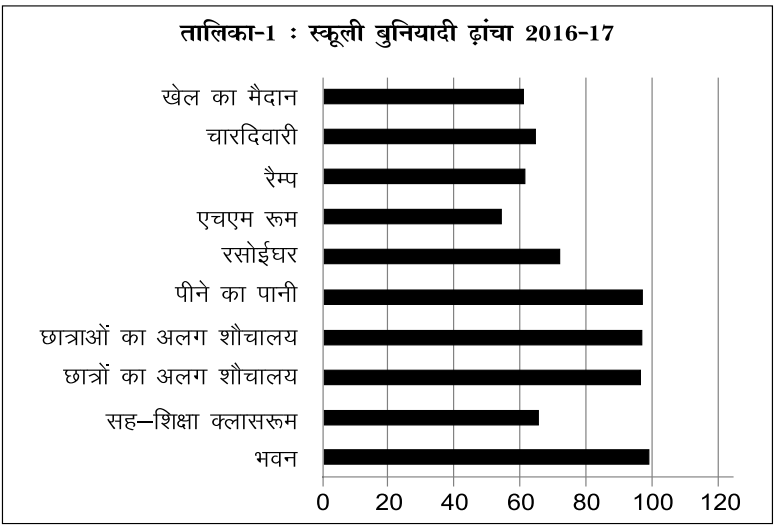

स्रोत: आरटीई फोरम वार्षिक रिपोर्ट मार्च 2018

किल्लत है जिसकी वजह से वे शौचालय प्रयोग में नहीं हैं। शौचालय का निर्माण तो कर दिया गया लेकिन उन शौचालयों का प्रयोग आस-पास के बाहरी लोग करते हैं। या फिर बड़े बच्चों का इतना भय है कि छोटे बच्चे शौचालय का प्रयोग इसलिए नहीं कर पाते क्योंकि उन शौचालयों में यौन शोषण होता है। यह महज वाक्य नहीं बल्कि इसे साफतौर पर देखा गया है।

स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की स्थिति

हमारे सरकारी स्कूलों में लगातार बच्चों के नामांकन में एक ओर वृद्धि दिखाई देती है लेकिन वहीं सच्चाई यह भी है कि बच्चे बीच में ही स्कूल छोड़ देते हैं। यदि हम प्राथमिक स्तर पर स्कूल बीच में छोड़ने वाले बच्चों की दर 6.35 फीसदी देख पाते हैं तो वहीं उच्च माध्यमिक स्तर पर यह संख्या 5.67 फीसदी है। (स्रोत- डाईस एवं आरटीई फोरम मार्च, 2018) स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की संख्या लगभग 34.47 फीसदी है। लाख में बात करें तो ऐसे बच्चों की संख्या 17 लाख है जो बीच में ही स्कूल छोड़ देते हैं।

इन बच्चों के स्कूल छोड़ने के पीछे की परिस्थितियों का अध्ययन करें तो पाएंगे कि स्कूल पहुंचने के रास्ते दुर्गम पहाड़, सूने रास्तों आदि से गुजरते हैं। घर से स्कूल तक का सफर कई बार तय करता है कि बच्चे स्कूल बीच में छोड़ देंगे या फिर अपनी स्कूली तालीम पूरी करेंगे। स्कूली भूगोल, समाजो-सांस्कृतिक परिस्थितियां ऐसी हैं जो कम से

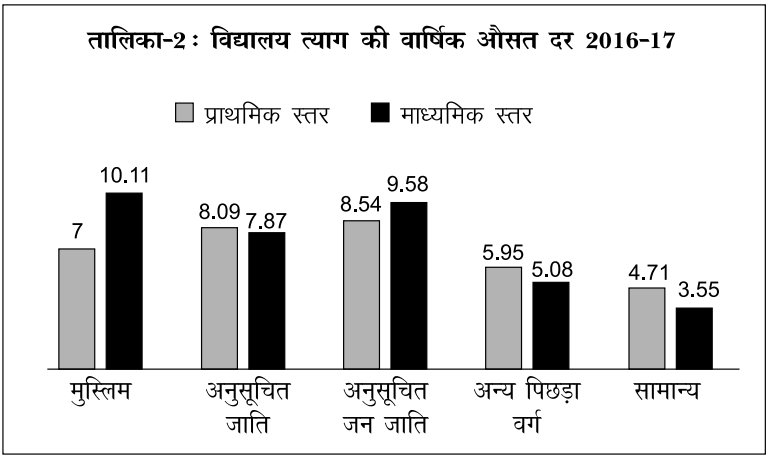

स्रोत: आरटीई फोरम वार्षिक रिपोर्ट मार्च 2018

कम लड़कियों को स्कूल तक पहुंचने में बाधा पैदा करती है। वहीं स्कूल में शौचालय का न होना भी एक प्रमुख कारणों में शामिल है। मुसलिम समुदाय और अनुसूचित जनजाति के बच्चों में बीच में स्कूल छोड़ देने की घटना ज्यादा चौकाने वाली है। मुसलिम समुदाय के बच्चों में 10.11 फीसदी है। वहीं अनुसूचित जनजाति के बच्चों में यह आंकड़ा 9.58 फीसदी दर्ज की गई है। यदि हम शिक्षण संस्थानों में बच्चों को शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक सुरक्षा प्रदान नहीं कर पाते तब भी बीच में स्कूल छोड़ने वालों की संख्या में बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। हालांकि यह एक विश्वास का मसला है कि यदि हमारे बच्चे उक्त स्तरों पर अपने आपको महफूज महसूस नहीं करेंगे तब वे स्कूल, कॉलेज आदि संस्थानों में आनंदपूर्ण शिक्षा-शिक्षण की प्रक्रिया से नहीं जुड़ पाएंगे। स्कूल एवं अन्य शिक्षण संस्थानों में दो स्तरों पर गंदगी को रेखांकित कर सकते हैं, एक बुनियादी ढांचा के स्तर पर और दूसरा संस्थागत बरताव के स्तर पर।

राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण 2017 की नजर में बच्चों की विषयगत दक्षता

स्कूली स्तर पर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के मकसद से सरकारी योजनाएं एवं विभिन्न सामाजिक संस्थाएं काम कर रही हैं। इनमें सरकारी प्रयास और योजनाएं भी बड़ी शिद्दत से चल रही हैं जिन्हें नजरअंदाज नहीं कर सकते। क्योंकि इन योजनाओं का मकसद दुरुस्त है। यदि ये सफल नहीं हो पा रही हैं तो दिक्कत योजनाओं में नहीं बल्कि इसके कार्यान्वयन में हैं। हमें यह सुनिश्चत करना होगा कि जो योजनाएं बनाई गईं उन्हें कैसे समय पर पूरे किए जाएं एवं उसके लिए सटीक रणनीति और रोड मैप

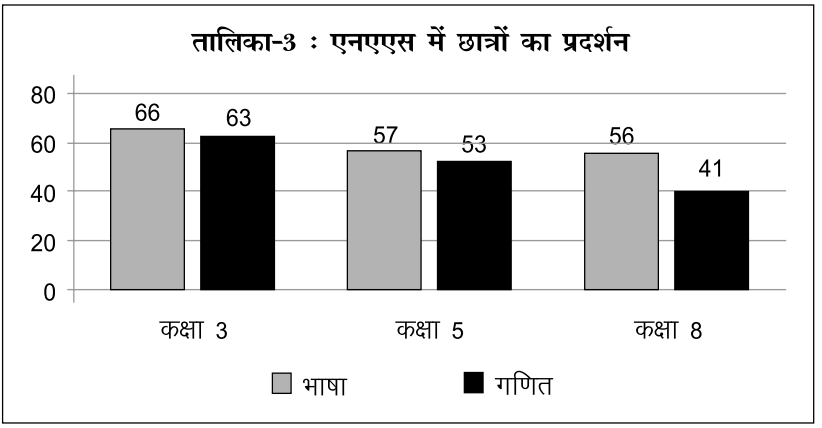

स्रोत: एनसीईआरटी, एनएएस, 2017

बनाकर उसे जमीन पर उतारने की आवश्यकता है। कुछ ऐसी ही योजनाएं सरकार की ओर समय-समय पर चलाई गईं। ज्यादा पीछे न जाते हुए यदि हम ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड, लोक जुम्बीस, ज्ञान-विज्ञान जत्था, मिशन पठन, मिशन बुनियाद, पढ़ेगा भारत तभी तो बढ़ेगा भारत आदि। किन्तु अफसोसनाक बात यह है कि इन तमाम प्रयासों के बावजूद हमारे बच्चों में भाषा, गणित विज्ञान आदि में बुनियादी दक्षता क्यों नहीं पहुंच पा रही है। यहां तक कि तमाम एनजीओ, कंपनियों के सीएसआर, टेक महिन्द्रा फाउंडेशन जो पूर्वी दिल्ली नगर निगम में प्राथमिक स्कूलों के तकरीबन 65,00 शिक्षकों के प्रशिक्षण पर जोर देती हैं। अंत: सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा संस्थान जो टेक महिन्द्रा फाउंडेशन और पूर्वी दिल्ली नगर निगम के साझा प्रयास से शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का अभियान चल रहा है वह निश्चित ही प्रशंसनीय है। इस संस्था ने पिछले पांच सालों में 6888 शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान किया है। सवाल यहां यह उठता है कि एक ओर मास्टर ट्रेनर्र तैयार कर उन्हें विभिन्न स्कूलों में शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने में लगाया गया है वहीं दूसरी ओर सर्वे बताते हैं कि कक्षा 3 में भाषा में महज 66 फीसदी बच्चे ही दक्षता हासिल कर पाए हैं। वहीं यह आंकड़ा कक्षा के बढ़ने के साथ ही घटती जा रही हैं। जैसा कि उक्त तालिका में दिखाया गया है। 8वीं कक्षा तक आते-आते बच्चे न केवल भाषा में बल्कि गणित में भी पिछड़ते नजर आ रहे हैं। शिक्षाविद् एवं शिक्षाशास्त्री की मानें तो कहीं न कहीं हमारे बच्चों को पढ़ाने वाले शिक्षक व शिक्षिका को मिलने वाले प्रशिक्षण में कुछ कमी रह गई जिसका खामियाजा बच्चों को ताउम्र भुगतना पड़ता है। डाईट्स, एससीईआरटी शिक्षण संस्थानों में शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में किस

प्रकार की गुणवत्ता प्रशिक्षुओं को प्रदान की जा रही है, इसपर भी शिक्षक की पढ़ने-पढ़ाने की दक्षता निर्भर करती है।

सरकारी स्कूलों का बंद होना : एक खतरे का संकेत

	राज्य जहां स्कूल बंद हो गये	संख्या
1.	राजस्थान	17129
2.	गुजरात	13450
3.	महाराष्ट्र	13905
4.	उत्तराखंड़	1200
5.	तेलंगाना	4000
6.	उड़ीसा	5000
7.	कर्नाटक	12,000

स्रोत: आरटीई फोरम वार्षिक रिपोर्ट 2014-15

उक्त आंकड़े निश्चित ही एक ऐसी घटना की ओर इशारा करते हैं जो भविष्य में हमारे लिए चुनौतियां पैदा करेंगी।

पिछले 2013-14 से लेकर 2018 तक देश के विभिन्न राज्यों में सरकारी स्कूलों में ताला लगने शुरू हो चुके थे। हाल ही में ओडिशा में मुख्यमंत्री के निर्वाचित क्षेत्र में तकरीबन 1700 स्कूलों को बंद कर दिया गया। जबकि यह अनुसूचित जनजाति का इलाका था। वहीं राजस्थान में भी पिछले पांच वर्षों में 17,000 से ज्यादा सरकारी स्कूल बंद हो चुके हैं। उत्तराखंड़, तेलांगाना, महाराष्ट्र आदि राज्यों में भी धड़ल्ले से सरकारी स्कूल बंद हो रहे हैं। गौरतलब है कि इन बंद होते स्कूलों के पीछे तर्क यह दिया गया कि सरकार इन स्कूलों को चला पाने में सक्षम नहीं है। इसलिए इन्हें या तो बंद किया जा रहा है या फिर इन्हें दूसरे स्कूलों में समाहित किया जा रहा है। पीपीपी मोड में निजी स्कूलों के लिए रास्ते साफ किए जा रहे हैं। याद हो कि 2009 में 1600 मॉडल स्कूल खोलने की बात की गई थी। साथ ही वर्तमान सरकार भी मॉडल स्कूलों की स्थापना की घोषणा कर चुकी है। लेकिन वे मॉडल स्कूल कहां खुले और वहां कौन-से बच्चे पढ़ रहे हैं इसका अंदाजा हमें नहीं है। अभी भी हकीकत यही है कि देश की एक बड़ी आबादी के बच्चे इन सरकारी स्कूलों के भरोसे बैठे हैं। हमें किसी भी सूरत में इन सरकारी स्कूलों को बंद करने से बचाना होगा।

दरअसल शिक्षा का आंगन हमेशा से ही हमारी प्रमुख प्राथमिकता की सूची में जगह पाने से पीछे छूट गया है। इसका शिक्षा का अधिकार अधिनियम की सौ सालों की संघर्ष यात्रा गवाह है। इसके पीछे कई वजहें हैं– राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक। इन तमाम वजहों में सबसे प्रमुख कारण हमारी इच्छा शक्ति की कमी रही है। क्या सरकार और क्या नागर समाज शिक्षा के प्रमुख लक्ष्यों को कैसे हासिल करें इसके लिए रणनीति निर्माण, कार्य योजना, एक्शनटूल्स आदि विकसित कर शिक्षा में व्याप्त गंदगी को साफ कर सकते हैं। लेकिन अफसोसनाक हकीकत यही रही है कि शिक्षा को हमने पर्याप्त धन, समय और सरोकार से नहीं जोड़ा है। वरना क्या वजह है कि राष्ट्रीय नीति, समिति, नई शिक्षा नीति आदि होने के बावजूद भी हमारे देश में करोड़ की संख्या में बच्चे स्कूल से बाहर हैं। इससे बड़ी दर्दनाक और हास्यास्पद बात और क्या हो सकती है। एक ओर विकास की फर्राटेदार दौड़ लगाने के लिए छह और आठ लेन की सड़कें, फ्लाईओवर आदि तो बना रहे हैं लेकिन एक सरकारी स्कूल को इस स्तर की सुविधा नहीं प्रदान कर पा रहे हैं कि बच्चे निजी स्कूलों में जाने की बजाए सरकारी स्कूलों की ओर रुख करें। यह गुणवत्ता का भी मसला है। वास्तव में सरकारी स्कूलों से लेकर कालेज और विश्वविद्यालयों को एक बारगी असमर्थ घोषित कर खेल कुछ और खेलने की कोशिश की जा रही है। यदि हमने शिक्षा में व्याप्त इन गंदगियों को आज साफ नहीं कर पाए तो कोई कारण नहीं कि सतत विकास लक्ष्य 2030 तक भी प्राथमिक और उच्च प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालयों के स्तर तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सभी बच्चों को मुहैया करा पाएंगे।

संदर्भ

http://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/statistics/ESG2016_0.pdf

http://www.dise.in/Downloads/Publications/Documents/U&DISE&SchoolEducation InIndia&2013&14.pdf

http://www.un&documents.net/jomtien.htm

http://rteforumindia.org/wp&content/uploads/2018/09/National&Education&Policy&1986& mod&in&1992.pdf

http://rteforumindia.org/wp&content/uploads/2018/09/National&Education& Policy&1968_0.pdf

नाईक, जेपी, *शिक्षा आयोग और उसके बाद,* वाग्देवी प्रकाशन

नाईक, जेपी, *भारत में प्राथमिक शिक्षा शेष संकल्प,* वाग्देवी प्रकाशन

एनसीईआरटी, *पढ़ने की समझ,* 2009

बाला, ऋतु और प्रपन्न राघवेंद्र, *शिक्षा के नाम पर,* यश प्रकाशन, 2014

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1 अप्रैल 2018

शोध टिप्पणी/संवाद

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शिक्षा में सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

संजीव कुमार शुक्ला*

सारांश

शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है जो समाज में रहकर समाज के लोगों को समाज के लिए दी जाती है एवं बालक की शैक्षिक प्रगति में महत्वपूर्ण स्थान रखती है इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि बालक के मार्ग में आने वाली उन समस्त सामाजिक बाधाओं का अध्ययन किया जाए जो बालक की शिक्षा में बाधा उत्पन्न करते हैं। समाज बालक को शिक्षा अपने दो प्रमुख स्रोतों परिवार व विद्यालय के माध्यम से देता है, यदि परिवार व विद्यालय दोनों स्रोत बालक की शिक्षा में सही रूप से कार्य नहीं कर पाते हैं तो अनेक सामाजिक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं, यथा–

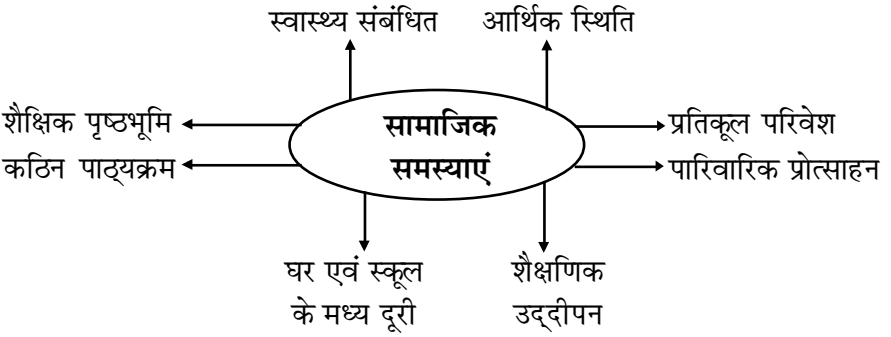

इन्हीं सब कारणों को ध्यान में रखते हुए शोधार्थी ने इस बात की आवश्यकता अनुभव की कि इस विषय में शोध कार्य की आवश्यकता है। इसलिए प्रस्तुत

* सहायक प्रोफेसर, बी.एड. विभाग, श्री गांधी महाविद्यालय, सिधौली, सीतापुर, उत्तर प्रदेश

अध्ययन में केवल सामाजिक बाधाओं को ही लिया गया है ताकि इन बाधाओं को दूर करके शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। इसके लिए न्यादर्श के रूप में माध्यमिक स्तर के छात्र-छात्राओं का चुनाव यादृच्छिक विधि द्वारा किया गया तथा अनुसंधान उपकरण के रूप में प्रश्नावली, साक्षात्कार व परीक्षण प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

प्रस्तावना

शिक्षा मनुष्य को विवेकशील व ज्ञान सम्पन्न बनाती है तभी तो वह अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ माना जाता है। शिक्षा ही बालक में निहित समस्त शक्तियों को प्रकाशित करती है, जिसके द्वारा मनुष्य की सुषुप्त शक्तियाँ जागृत होती हैं और उसकी कार्य क्षमता का विकास होता है। शिक्षा के द्वारा न केवल व्यक्ति अपितु समाज का भी विकास होता है। अत: बालक के साथ-साथ शिक्षा का समाज के लिए भी महत्व है, क्योंकि बालक अपनी शिक्षा समाज में रहकर ही प्राप्त करता है और पूर्ण व्यक्तित्व प्राप्त कर सामाजिक व्यक्तित्व का निर्माण करता है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके फलस्वरूप बालक के शैक्षिक विकास के लिए परिवार, समाज, विद्यालय, नगर, राज्य, राष्ट्र आदि संस्थाएँ भी उत्तरदायी होती हैं।

परिवार के साथ-साथ विद्यालय भी बालक के शैक्षिक विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। शिक्षा जो कि एक सामाजिक प्रक्रिया है, विद्यालय इसे गति प्रदान करता है। विद्यालय में शिक्षा देने का कार्य एक निश्चित पाठ्यक्रम के द्वारा चलता है, यदि समाज को बालक का उत्तम शैक्षिक विकास करना है तो ये आवश्यक है कि विद्यालय अपने संगठन, पाठ्यक्रम व शैक्षिक सुविधाओं व कार्यक्रमों के द्वारा बालक की शिक्षा में पूरा सहयोग प्रदान करे।

समाज में परिवार व विद्यालय के अतिरिक्त बालक की शिक्षा पर उसके आस-पड़ोस व बाह्य वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है, क्योंकि परिवार व विद्यालय के अतिरिक्त बालक अपना समय इसी परिवेश में व्यतीत करता है, यदि बालक अच्छे परिवेश में रहता है तब उस पर अच्छा प्रभाव पड़ता है और उसकी शिक्षा की प्रगति अच्छी दिशा में होती है, परन्तु बुरा परिवेश मिलने पर बालक में असामाजिकता आने का भय बना रहेगा और उसकी शैक्षिक प्रगति में बाधा उत्पन्न हो जायेगी। अत: समाज में बालक की शिक्षा-परिवार, विद्यालय व परिवेश पर निर्भर करती है। बालक के उत्तम शैक्षिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि समाज के महत्वपूर्ण स्रोत– परिवार, विद्यालय व

वातावरण का यह कर्तव्य हो जाता है कि वो अपने दोषों को दूर कर अपने उत्तरदायित्व को इस प्रकार निभाए जिससे बालक की शिक्षा में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न न हो।

समस्या कथन

जनपद सीतापुर के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों (छात्र एवं छात्राओं) की शिक्षा में सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

उद्देश्य कथन

प्रस्तुत शोध निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किया गया है–

(i) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में स्वास्थ्य संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(ii) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में आर्थिक स्थिति संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(iii) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में कठिन पाठ्यक्रम संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(iv) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में घर एवं स्कूल के मध्य दूरी से संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(v) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में प्रतिकूल परिवेश संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(vi) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में पारिवारिक प्रोत्साहन संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(vii) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में शैक्षणिक उद्दीपन संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं

(i) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में स्वास्थ्य संबंधित सामाजिक बाधाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(ii) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में आर्थिक स्थिति संबंधित सामाजिक बाधाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(iii) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में कठिन पाठ्यक्रम संबंधित सामाजिक बाधाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(iv) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में घर एवं स्कूल के मध्य दूरी संबंधित सामाजिक बाधाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(v) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में प्रतिकूल परिवेश संबंधित सामाजिक बाधाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(vi) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में पारिवारिक प्रोत्साहन संबंधित सामाजिक बाधाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(vii) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में शैक्षणिक उद्दीपन संबंधित सामाजिक बाधाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

परिसीमन

शोधार्थी ने प्रस्तुत शोधकार्य को सीमित समय, श्रम, पूँजी को दृष्टिगत रखते हुए व समय अभाव के कारण एवं अध्ययन को ध्यान में रखते हुए उत्तर प्रदेश राज्य के सीतापुर जनपद के अंतर्गत आने वाले विभिन्न ग्रामीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों को चुना है।

संबंधित साहित्य का अध्ययन

संबंधित साहित्य के सर्वेक्षण के बिना किया गया अध्ययन अँधेरे में चलने के समान होता है। सही स्थिति यह है कि संबंधित साहित्य के अध्ययन से ही शोधार्थी को इस बात का ज्ञान हो पाता है कि इस क्षेत्र विशेष में कितना कार्य हो चुका है, उसने किस विधि से कार्य किया है, उसके निष्कर्ष क्या आये हैं आदि?

शिक्षा में होने वाली बाधाओं के विषय में विभिन्न शोध हुए, जिनके आधार पर विद्यार्जन में होने वाली बाधाओं को ज्ञात किया गया, परन्तु ''शिक्षा में सामाजिक बाधाएं'' विषय पर व्यापक रूप से शोध नगण्य हैं। बेरर के अनुसार अभी काफी मात्रा में अध्ययन निपुणता प्राप्त नहीं है और इसके लिये संतोषजनक साहित्य उपलब्ध नहीं है। इसके पश्चात् मार्सी एवं मैसविंगों 1970 ने भी इस समस्या की गम्भीरता को इंगित करते हुए कहा था कि ''पुराने समय से अभी तक कई शैक्षिक बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित नहीं किया गया'' जो शोध कार्य शिक्षा में होने वाली समस्याओं या बाधाओं के विषय में किये गये, उनका स्वरूप एकांकी अधिक पाया गया।

संबंधित विषय में पूर्व में भी शोधकर्ताओं द्वारा शोधकार्य किये जा चुके हैं जिनका विवरण यथावत् है–

- रूहेला (1963-64) के निर्देशन में अलवर जिले की एक पंचायत समिति में एक शिक्षा प्रसार अधिकारी द्वारा सम्पन्न किये गये शिक्षा में सामाजिक बाधाओं के संदर्भ में शिक्षक की समस्याओं का समाजशास्त्रीय सर्वेक्षण से निम्नलिखित निष्कर्ष ज्ञात हुए–
  - (i) 50 प्रतिशत शिक्षक अन्य गाँवों के रहने वाले थे।
  - (ii) 47 प्रतिशत शिक्षक प्रतिदिन पढ़ाने के लिये बाहर से आते थे व शाम को वापस अपने गाँव लौट जाते थे।
  - (iii) 25 प्रतिशत शिक्षक पंचों, सरपंचों, समिति के अधिकारियों के बार-बार हस्तक्षेप से परेशान थे।
  - (iv) 40 प्रतिशत शिक्षकों को उचित वेतन व सुविधाएँ नहीं मिली हुई थीं। कई प्रतिशित शिक्षकों को अप्रशिक्षित शिक्षक का वेतन मिल रहा था।
  - (v) केवल 6 प्रतिशत शिक्षकों का ध्यान शिक्षक शिक्षण सामग्री की कमी और छात्र व शिक्षण संबंधी अन्य कठिनाईयों की ओर गया था।
- विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) के अनुसार दूषित एवं अस्पष्ट पाठ्यक्रम भी विद्यार्थियों की शिक्षा में एक बाधा है। क्योंकि कठिन पाठ्यक्रम होने के कारण छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि सही अनुपात में नहीं आ पाती है। पाठ्यक्रम में भी भाषा की समस्या शिक्षा में बाधा पहुँचाती है।
- माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने विद्यालयी पाठ्यक्रम की आलोचना करते हुए निम्नलिखित दोष बाताये–
  - (i) पाठ्यक्रम संकुचित है।
  - (ii) यह किताबी व सैद्धान्तिक है।
  - (iii) विषयों की अधिकता है और पाठ्यक्रम के तत्वों में गहराई की कमी है।
  - (iv) क्रियात्मक पहलू की उपेक्षा की गयी है, जिससे व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास नहीं हो पाता।

(v) किशोरों की आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुकूल नहीं है।

(vi) विद्यालयों में प्रयुक्त पाठ्यक्रम परीक्षा केन्द्रित है।

(vii) तकनीकी तथा व्यावसायिक विषयों का तथा तकनीकी तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रम का समावेश नहीं है।

- प्राथमिक शिक्षा विभाग (1956) द्वारा 10,000 बालकों को लेकर महाराष्ट्र राज्य में मुंबई के बाली क्षेत्र में उनके अनुत्तीर्ण होने के सम्बन्ध में शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन किया। बाली क्षेत्र के 22 समूहों में से विभिन्न भाषाई और आर्थिक स्तर के 9316 बालकों का चयन किया गया। इस सर्वेक्षण में गरीबों के बालकों के विद्यालयों में जाने तथा विद्यालय जाने से रुकने के कारणों का भी अध्ययन किया गया। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष निम्नांकित हैं–

  (i) 25 प्रतिशत बालकों का विद्यालय से अवरोधन का कारण गरीबी, घर का काम तथा शारीरिक अक्षमता थी।

  (ii) 30 प्रतिशत बालक आर्थिक स्थिति निम्न होने के कारण विद्यालय छोड़ने पर मजबूर पाए गए।

  (iii) अधिकांश छात्रों में निम्न बुद्धि स्तर पाया गया।

  (iv) 40 प्रतिशत बालकों में अध्यापकों का व्यवहार तथा पाठ्यक्रम की नीरसता भी विद्यालय छोड़ने का कारण पाया गया।

  (v) 20 प्रतिशत बालक स्वास्थ्य समस्या होने के कारण बहुत दिनों तक विद्यालयों में न जाने के कारण या तो पढ़ना बन्द कर देना या अनुत्तीर्ण हो जाने के कारण विद्यालय छोड़ देना पाया गया।

  (vi) बालकों का कुछ काम-धंधे योग्य हो जाना भी स्कूल में अनुपस्थित रहने का कारण पाया गया।

- ऐबिल (1969) ने बुद्धि में वर्ग-भेद के लिए आर.डी. टडेनवन के योगदान का उदाहरण प्रस्तुत किया, उनकी आख्या है कि सर्वोत्तम बुद्धि परीक्षण द्वारा भी जो परिणाम प्राप्त होते हैं, उनके आधार पर भिन्न-भिन्न आर्थिक सामाजिक स्तर के छात्रों, ग्रामीण अंचल के छात्रों तथा शहरी अंचल के छात्रों के बौद्धिक स्तर में अन्तर होता है।

- मिल्टन राकी (1985) ने शैक्षिक समस्याओं को ज्ञात करने के लिए चार उच्च माध्यमिक विद्यालय– 1. राजकीय छात्रा विद्यालय, 2. मिशनरी छात्रा विद्यालय, 3. अनुदानित छात्र विद्यालय, 4. मिशनरी छात्र विद्यालय में प्रत्येक विद्यालय से केवल उच्च माध्यमिक कक्षा के छात्रों का चयन किया गया है। प्रत्येक विद्यालय के 30–30 विद्यार्थी न्यायदर्श में लिए गये। न्यायदर्श में कुल 120 विद्यार्थी लिये गये। उनके अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–
  - (i) अत्यधिक शैक्षिक समस्याओं वाले वर्ग में अधिकतम जाँच संख्या राजकीय विद्यालय की छात्राओं की पायी गयी जो मिशनरी विद्यालय की छात्राओं से दोगुनी थी।
  - (ii) अधिक शैक्षिक समस्याओं वाले वर्ग में अधिकतम संख्या अनुदानित विद्यालय के छात्रों (63.6 प्रतिशत) मिशनरी विद्यालय के छात्र (50 प्रतिशत) अनुदानित विद्यालय से कम है। राजकीय विद्यालय में मिशनरी विद्यालय से अधिक छात्राएं इस वर्ग में हैं।
  - (iii) अधिक शैक्षिक समस्याओं वाले वर्ग में मिशनरी विद्यालय से राजकीय विद्यालय से कम छात्राएं हैं। छात्रों में अनुदानित विद्यालय से मिशनरी विद्यालयों से अधिक शैक्षिक समस्याएं हैं।
- डॉ. शर्मा (2003) ने शिक्षा में सामाजिक बाधाओं के संदर्भ में अस्वस्थता भी एक महत्वपूर्ण कारण पाया। उन्होंने पाया कि शारीरिक रूप से अस्वस्थ रहने वाले छात्र शिक्षा में पिछड़ जाते हैं। अवलोकन एवं साक्षात्कार से ज्ञात हुआ कि शिक्षा में पिछड़ेपन का एक प्रमुख कारण छात्र की अस्वस्थता है। इस विषय में अध्ययन करने पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए–
  - (i) अनेक छात्र शारीरिक रूप से अस्वस्थ पाए गए। उनमें प्रायः आँखें कमजोर होना, सिरदर्द, चक्कर आना, खुजली, कमजोरी एवं विकलांगता आदि कारण पाए गए।
  - (ii) अधिकांश छात्र पौष्टिक भोजन न मिलने तथा अपर्याप्त भोजन न प्राप्त करने के कारण यह अवस्थता पाई गई।
  - (iii) स्वास्थ्य के संबंध में उचित ज्ञात न होने के कारण भी छात्र रोग ग्रस्त पाये गये।

(iv) अधिकतर बालकों में स्वास्थ्य शिक्षा का अभाव पाया गया।

इस प्रकार उक्त संदर्भित साहित्यक अध्ययन से स्पष्ट है कि शिक्षा में सामाजिक बाधाओं के संदर्भ में जो शोध हुए हैं, वह विषय की व्यापकता को देखते हुए बहुत कम है। अत: शोधार्थी ने 'शिक्षा में सामाजिक बाधाओं का अध्ययन' शीर्षक को शोधकार्य हेतु चुना। यह एक एक्सप्लोरेटरी शोध है अत: पिछड़े वर्ग की शिक्षा में सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में यह शोध अध्ययन एक छोटा-सा प्रयास है।

न्यायदर्श एवं न्यायदर्शन विधि

इस शोध कार्य हेतु उत्तर प्रदेश राज्य के सीतापुर जनपद के 60 माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में से 10 विद्यालयों को यादृच्छिक न्यादर्श विधि से चुना गया, जिसमें 8 शहरी विद्यालय तथा 2 ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालय थे। अध्ययन हेतु चुने गये विद्यालयों में से विद्यार्थियों का चुनाव भी यादृच्छिक विधि से किया गया है। अध्ययन हेतु चुने गये विद्यालयों तथा विद्यार्थियों की संख्या का विवरण निम्नलिखित हैं: 1. राजकीय इण्टर कॉलेज, सीतापुर (25), 2. राजा रघुबर दयाल इण्टर कॉलेज, सीतापुर (15), 3. उजागर लाल इण्टर कॉलेज, सीतापुर (12), 4. उदयपुर पब्लिक इण्टर कॉलेज, सीतापुर (35), 5. आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, सीतापुर (15), 6. अग्रवाल पब्लिक इण्टर कॉलेज, सीतापुर (18), 7. गाँधी इण्टर कॉलेज, सिधौली, सीतापुर (15), 8. आर.एम.पी. इण्टर कॉलेज, सीतापुर (35), 9. जी.जी.आई.सी., खैराबाद, सीतापुर (30)।

इस प्रकार कुल 200 छात्र एवं छात्राओं का चयन बहुस्तरीय यादृच्दिक विधि द्वारा किया गया। विद्यार्थियों की शिक्षा में सामाजिक बाधाओं के अध्ययन हेतु 100 छात्र एवं 100 छात्राओं का चयन भी यादृच्छिक विधि से किया गया।

न्यायदर्श के छात्रों की शिक्षा में सामाजिक बाधाओं के अध्ययन हेतु 100 छात्र एवं 100 छात्राओं का चयन किया गया। शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की संख्या 120 व ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की संख्या 80 है। सरकारी विद्यालयों से 100 विद्यार्थियों (45 छात्र व 55 छात्राएँ) व अर्द्धसरकारी विद्यालयों से 100 (55 छात्र व 45 छात्राएँ) का चयन किया।

उपकरण

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने अनुसंधान के उपकरण के रूप में साक्षात्कार, प्रश्नावली, प्रेक्षण प्रविधि का प्रयोग किया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या

तालिका–1

छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में स्वास्थ्य संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

विद्यार्थी	*संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*क्रान्तिक अनुपात*
छात्र	100	2.06	0.78	2.70[xx]
छात्राएँ	100	1.79	0.64	

तालिका–1 में दिये गये आँकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि छात्र एवं छात्राओं, दोनों की शिक्षा में स्वास्थ्य सम्बन्धित सामाजिक बाधाओं में अन्तर पाया गया है। (क्रान्तिक अनुपात–2.70, सार्थकता स्तर–0.01)। तालिका से यह भी पता चलता है कि छात्रों का मध्यमान छात्राओं की अपेक्षा अधिक है।

तालिका–2

छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में आर्थिक स्थिति संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

विद्यार्थी	*संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*क्रान्तिक अनुपात*
छात्र	100	1.16	0.78	1.20
छात्राएँ	100	1.28	0.53	

तालिका–2 में दिये गये आँकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि छात्र एवं छात्राओं द्वारा आर्थिक स्थिति संबंधित कारक पर लगभग समान मध्यमान अंक को प्राप्त किया। इससे स्पष्ट होता है कि पाठ्यक्रम को शिक्षा में बाधक किसी वर्ग विशेष द्वारा नहीं माना गया है।

तालिका-3

छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में कठिन पाठ्यक्रम संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

विद्यार्थी	*संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*क्रान्तिक अनुपात*
छात्र	100	0.48	1.23	1.24
छात्राएँ	100	0.69	0.90	

तालिका-3 में दिये गये आँकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि कठिन पाठ्यक्रम संबंधित सामाजिक बाधा विद्यार्थियों के लिंग द्वारा प्रभावित नहीं होती है। इस प्रकार प्राप्त निम्न मध्यमान प्राप्तों से स्पष्ट होता है कि छात्र तथा छात्राओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका-4

छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में घर एवं स्कूल के मध्य दूरी संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

विद्यार्थी	*संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*क्रान्तिक अनुपात*
छात्र	100		2.70	1.22
छात्राएँ	100	3.30	1.60	

तालिका-4 में दिये गये आँकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि घर एवं स्कूल के मध्य दूरी संबंधित सामाजिक बाधाओं का विद्यार्थियों की शिक्षा पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। (क्रान्तिक अनुपात-3.53, सार्थकता स्तर-.01)। पुनः छात्राओं का मध्यमान छात्रों की अपेक्षा अधिक होने से यह पता चलता है कि घर एवं स्कूल के मध्य दूरी छात्राओं की शिक्षा में बाधक है।

तालिका-5

छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में प्रतिकूल परिवेश संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

विद्यार्थी	*संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*क्रान्तिक अनुपात*
छात्र	100	5.30	1.64	2.92^{xx}
छात्राएँ	100	4.54	2.29	

तालिका–5 में दिये गये आँकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि दोनों के मध्यमानों के बीच अन्तर सार्थक पाया गया (क्रान्तिक अनुपात–2.92, सार्थकता स्तर–.01)। इससे स्पष्ट होता है कि उच्च मात्रा में प्राप्त प्रतिकूल परिवेश शिक्षा को प्रोत्साहित करते हैं तथा निम्न मात्रा में उपस्थित परिवेश इसमें बाधा उत्पन्न करते हैं।

तालिका–6

छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में पारिवारिक प्रोत्साहन संबंधित सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

विद्यार्थी	*संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*क्रान्तिक अनुपात*
छात्र	60	4.13	0.99	4.64
छात्राएँ	60	3.00	1.49	

तालिका–6 में दिये गये आँकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि दोनों के बीच प्रकट मध्यमानों की तुलना करने पर उच्च स्तर का अन्तर स्पष्ट होता है। (क्रान्तिक अनुपात–4.65, सार्थकता स्तर–.01)।

तालिका–7

छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में शैक्षणिक उद्दीपन संबंधित शिक्षा में सामाजिक बाधाओं का तुलनात्मक अध्ययन

विद्यार्थी	*संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*क्रान्तिक अनुपात*
सरकारी	100	3.00	1.75	1.16
अर्द्धसरकारी	100	3.28	1.65	

तालिका–7 में दिये गये आँकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि दोनों समूहों के द्वारा लगभग बराबर मध्यमान अंक करने पर इस बात की पुष्टि होती है कि इस विमा को शिक्षा में बाधक किसी विद्यालय संगठन विशेष द्वारा नहीं माना गया है। (क्रान्तिक अनुपात–1.16, असार्थक 1 मध्यमान)।

निष्कर्ष

उपर्युक्त अध्ययन के परिणामस्वरूप यह निष्कर्ष निकलता है कि स्वास्थ्य समस्या, पाठ्यक्रम की जटिलता, निवास स्थान से स्कूल की दूरी तथा पारिवारिक प्रोत्साहन इन विमाओं पर छात्र एवं छात्राएं समान पाई गयीं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उक्त

कारणों के कारण लैंगिक विभिन्नता होने पर भी विद्यार्थियों की शिक्षा में कोई सार्थक बाधा उत्पन्न नहीं होती है। उसके विपरीत आर्थिक स्थिति, शैक्षिक पृष्ठभूमि, प्रतिकूल परिवेश तथा शैक्षणिक उद्दीपक जैसे सामाजिक कारक छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में बाधक पाए गए। छात्रों ने छात्राओं की अपेक्षा निम्न आर्थिक स्थिति, निम्न पारिवारिक, शैक्षिक स्थिति तथा न्यून शैक्षणिक उद्दीपक छात्रों की शिक्षा में छात्राओं की अपेक्षा बाधक पाए गए। जबकि प्रतिकूल परिवेश के कारण छात्राओं की अपेक्षा अधिक प्रभावित होती है।

उपरोक्त सामाजिक कारकों के कारण शिक्षा में बाधा उत्पन्न होना स्वाभाविक है। छात्रों में छात्राओं की अपेक्षा न्यून शैक्षणिक उद्दीपकों की उपस्थिति का कारण समान्यत: वर्तमान में विद्यमान बेरोजगारी की समस्या तथा महिलाओं को विभिन्न व्यवसायों में 30 प्रतिशत आरक्षण की सुविधा प्रदान न किया जाना है। इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर में शिक्षा केवल सन्तोषजनक आर्थिक स्थिति तथा शिक्षित परिवारों की अधिकतर लड़कियाँ प्राप्त कर रही हैं, जबकि लड़कों की स्थिति में निम्न आर्थिक स्थिति तथा कम पढ़े-लिखे पारिवारिक पृष्ठभूमि के लड़कों के द्वारा भी माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त की जा रही है। इसका कारण स्पष्ट है कि परिवार की रोजी-रोटी का उत्तरदायित्व हमारे समाज में लड़कों के ऊपर होने के कारण उनको शिक्षित करना हम लोग आवश्यक समझते हैं, जबकि लड़कियों की स्थिति में उनका शिक्षित होना आवश्यक नहीं माना जाता है। सम्भवत इसी कारण लड़कियों का मध्यमान प्राप्तांक आर्थिक स्थिति तथा शैक्षणिक पृष्ठभूमि विमाओं पर लड़कों की अपेक्षा सार्थक रूप से पाए गये।

भावी शोध के लिए सुझाव

प्रस्तुत शोध में समय की न्यूनता के कारण कुछ कमियाँ रह गयी हैं। कमियाँ और उसकी पूर्ति हेतु सुझाव इस प्रकार हैं–

(i) प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने अपना अध्ययन केवल माध्यमिक स्तर पर किया है। इसे शिक्षण के विभिन्न स्तरों पर भी किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भावी अनुसंधानकर्ता विभिन्न स्तरों पर तुलनात्मक अध्ययन भी कर सकते हैं।

(ii) प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने केवल सीतापुर जिले के संक्षिप्त भाग के विद्यार्थियों का अध्ययन किया है। यदि अध्ययन दूरस्थ क्षेत्रों में विद्यार्थियों पर किया जाये तो परिणाम और अधिक अच्छे और सही प्राप्त होने की सम्भावना है।

(iii) प्रस्तुत शोध में विद्यार्थियों की शिक्षा के केवल सामाजिक बाधाओं का अध्ययन किया गया है। इसके अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक रूढ़ियाँ एवं परम्पराओं आदि बाधाओं का भी अध्ययन किया जा सकता है।

(iv) प्रस्तुत अध्ययन विज्ञान तथा कला वर्ग के अलग-अलग विद्यार्थियों पर भी किया जा सकता है।

(v) विभिन्न जातियों, पिछड़ी जातियों, अनुसूचित जातियों आदि की शिक्षा में पिछड़ेपन के लिए सामाजिक कारक कहाँ तक उत्तरदायी हैं। इसको भी शोध का विषय बनाया जा सकता है।

संदर्भ

कपिल, एच.के. (2004), *अनुसंधान विधियाँ,* एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।

गुप्ता, एस.पी. एवं गुप्ता, अलका (2011), *साँख्यिकीय विधियाँ,* शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

दादू, प्रतिभा (1997), *ए स्टडी ऑफ पर्सनालिटी, वैल्यूज एण्ड रिलीजिअस एटीट्यूड्स ऑफ अर्बन एण्ड रूरल मेल्स एण्ड फीमेल्स इन द परव्यू ऑफ सोशियो इकोनामिक स्टेटस।* पी.एच.डी. साइकोलॉजी, आगरा यूनीवर्सिटी, फिफ्थ सर्वे ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, 1988-93, पृष्ठ 877।

पाठक, पी.डी. (2013-2014), *शिक्षा मनोविज्ञान,* अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।

भटनागर, इन्दू (1984), *ए स्टडी ऑफ द सम फैमिली करेक्ट्रस्ट्रिक एज रिलेटिड टू सेकेण्डरी स्कूल स्टूडेन्ट्स एडजिस्टमेण्ट एण्ड स्कूल लर्निंग,* पी-एच.डी. थीसिस, मेरठ यूनिवर्सिटी।

राय, पारसनाथ (1996), *अनुसन्धान परिचय,* लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।

वर्मा, मोहन (2004), *ए कम्पेरेटिव स्टडी ऑफ एडजेस्टमेन्ट एण्ड पर्सनल्टी ट्रेट्स ऑफ रूरल एण्ड अर्बन स्टूडेन्ट्स,* इण्डियन जर्नल ऑफ एजूकेशन रिसर्च, वोल्यूम-23, नं.-02 जुलाई-दिसम्बर 2004।

सिंह, अरुण कुमार (2014), *मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ,* मोतीलाल बनारसी दास, पटना।

सिंह, ए.एन. एवं सिंह, बी.के. (2007), *सामाजिक अनुसंधान,* में. रैपिड बुक सर्विस, लखनऊ।

सिंह, ए.एन. (2007), *सांख्यिकी,* लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

सिन्हा, डी.एन. (1965), *ए साइकोलोजिकल एनालिसिस ऑफ सम फैक्टर्स एसोसियेटेड विथ सक्सेस एण्ड फेल्योर इन यूनिवर्सिटी एजुकेशन,* डिपार्टमेन्ट ऑफ साइकोलोजी, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी।

सरीन, शशिकला एवं सरीन, अंजनी (नवीन संस्करण), *शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ,* विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

सुखिया, एस.पी. व मेहरोत्रा, पी.वी. एवं मेहरोत्रा, आर.एन. (1990), *शैक्षिक अनुसन्धान के मूल तत्व,* विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

श्रीवास्तव (2004), *ए कम्पेरिटिव स्टडी ऑफ वेल्यूज इन द स्टूडेन्टस ऑफ सिमिलर सोशियो इकोनोमिक बैकग्राउण्ड स्टडिंग इन इंग्लिश मीडियम एण्ड हिन्दी मीडियम स्कूल,* इण्डियन जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, वोल्यूम-23, नं.-02, जुलाई-दिसम्बर-2004।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

शोध टिप्पणी/संवाद

अध्यापक दबावग्रस्तता एवं व्यावसायिक मूल्य

बृजेश कुमार पाण्डेय*

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन में अध्यापकों की दबावग्रस्तता एवं व्यावसायिक मूल्यों के संबंध में अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन हेतु 80 स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में से 500 अध्यापकों को न्यादर्श के लिए चयनित किया गया। अनुसंधान में सम्मलित चरों को मानते हुए मानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग किया गया है। स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की दबावग्रस्तता एवं उनके व्यावसायिक मूल्यों के मध्य संबंध है। महाविद्यालयों में कार्यरत पुरुष शिक्षकों की दबावग्रस्तता एवं महिला शिक्षकों की दबावग्रस्तता के मध्य संबंध है। महाविद्यालय में कार्यरत पुरुष शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्य एवं महिला शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्य के मध्य अन्तर नहीं है।

आज प्रत्येक व्यक्ति का जीवन प्रतिस्पर्धा और दूसरों के समान उन्नतिशील व्यक्ति बन जाने की प्रबल इच्छाओं से पीड़ित है। यह पीड़ा उसे दबाव के जाल में फंसा देती है। जीवन की घटनाएं एवं समस्याएं जहाँ विभिन्न प्रकार के लक्ष्यों को जन्म देती हैं, वहाँ भय की स्थिति भी पैदा करती है। वर्तमान समाज व राष्ट्र परिवर्तन व विकास के एक नाजुक परन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण दौर से गुजर रहा है। बदलती हुई इन परिस्थितियों के कारण आम आदमी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है तथा उनमें कुंठा व दबाव का क्षेत्र भी बढ़ रहा है इन बदलती परिस्थितियों तथा सामाजिक समीकरणों से शिक्षक वर्ग भी अछूता नहीं रहा है। अध्यापक भी अपने कार्यक्षेत्र में स्वयं के भीतर सामंजस्य स्थापित करने में अनेक बार द्वन्द्व और कुंठा महसूस करते हैं।

*सह-प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, संत विनोबा पी.जी. कालेज, देवरिया (उ.प्र.)

प्रत्येक व्यक्ति अपनी मूल प्रवृत्तियों व क्षमताओं के अनुसार सीखता है। व्यक्ति के व्यवहार के पीछे एक प्रकार की आन्तरिक भावना कार्य करती है जो किसी दिशा में क्रिया करने की प्रेरणा देती है। वास्तव में इस प्रेरणा शक्ति से बालक अपने इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित होता है, लेकिन ये भी सच है कि वह हमेशा अपने इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सकता है, क्योंकि उनके मार्ग में बहुत बड़ी बाधा आ जाती है और व्यक्ति के मन-मस्तिष्क पर एक बोझ व दबाव आ जाता है। दबाव हमारे समाज की सामान्य घटना बन गयी है और प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित करती है।

दबाव हमें किसी कार्य के प्रति दिशा देता है, परन्तु दबाव की अधिकता के कारण व्यक्ति अपने संतुलन को ठीक ढंग से बनाये रखने में असमर्थ हो जाता है। दबाव निराशा के कारण होने वाली अप्रिय और परेशान करने वाली भावनाओं का अनुभव है। दबाव, तनाव की वह अवस्था है जो दाब या संघर्ष की माँग पर उत्पन्न करता है, जिसके साथ व्यक्ति समुचित प्रतिफल नहीं कर पाता है। सामान्यत: यह समझा जाता है कि दबाव जीवन की नकारात्मक घटनाओं या दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं से होता है। दबाव सकारात्मक तनाव एवं नकारात्मक तनाव, दोनों के कारण उत्पन्न होता है। तनाव में मनोवैज्ञानिक तथा दैहिक, दोनों तरह की अनुक्रियाएँ होती हैं। दबाव में व्यक्ति मानसिक तथा शारीरिक, दोनों रूपों से क्षुब्धता का अनुभव करता है। दबाव कम समय तक चलेगा या लम्बे समय तक चलेगा, यह बहुत कुछ तनाव उत्पन्न करने वाली घटनाओं या परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

व्यावसायिक मूल्य विश्वासों का समुच्चय है, जो शिक्षकों के व्यवहार को नियंत्रित करते हैं जो उनके लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक भी होते हैं और मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि भी करते हैं। व्यावसायिक मूल्यों से तात्पर्य शिक्षकों का अपने उत्तरदायित्वों एवं कर्त्तव्यों के प्रति जागरूकता से है। शिक्षक को अपने पेशे या व्यवसाय के प्रति क्या मूल्य होना चाहिए तथा उसे अपने मूल्यों के प्रति कितना सजग व जिम्मेदार होना चाहिए। आज देखने को मिल रहा है कि शिक्षक शिक्षण कार्य से विरत हो रहे हैं। वे अपने कर्त्तव्यों को भलीभाँति नहीं कर पा रहे हैं, जिससे शिक्षा के स्तर में गिरावट आ रही है। शिक्षकों की प्रतिष्ठा के ऊपर समाज द्वारा ऊगंलियाँ उठने लगी हैं। ऐसी स्थिति में शिक्षकों की प्रतिष्ठा गिर रही है। वह अपने व्यावसायिक मूल्यों के प्रति निराश होता जा रहा है। ऐसी स्थिति उत्पन्न होने से विद्यालय, समाज, छात्र व शैक्षिक वातावरण सभी प्रभावित हो रहे हैं। अध्यापक समाज का दर्पण है तथा उसके कुशल निर्देशन में ही

शिक्षण कार्य चलता है। अत: समाज के मूल्यों को सुधारने हेतु स्वयं उसे अपने व्यावसायिक मूल्यों पर ध्यान देना होगा।

वर्तमान में सरकार उच्च शिक्षा का निजीकरण करने पर बल दे रही है, जिससे उच्च शिक्षा के क्षेत्र में स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। स्ववित्तपोषित की अवधारणा है जो व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करे, वही उसका मूल्य अदा करे। स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों की अपनी समस्याएं हैं, परन्तु इन महाविद्यालयों में शिक्षकों को अत्यधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यहाँ के शिक्षक पूरी तरह से प्रबन्ध तन्त्र के नियंत्रण में होते हैं। यहाँ अध्यापक स्वयं को दबाव व द्वन्द्व के घेरे में पाता है। वह अपने व्यावसायिक मूल्यों के प्रति निराशवान होता जा रहा है।

शिक्षा समाज द्वारा निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु एक बड़ा ही प्रभावशाली साधन है। शिक्षा प्रक्रिया में शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति शिक्षकों द्वारा ही सम्भव है। किसी भी विद्यालय का शैक्षिक स्तर अनेक कारणों, जैसे छात्रों, अध्यापकों, प्राचार्यों की आपसी अन्त:क्रिया पर निर्भर करता है। सदस्यों की पारस्परिक अन्त:क्रिया अलग-अलग प्रकार की होती है, जिसका प्रभाव संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति पर पड़ सकता है। पारीक ने नवोदय विद्यालयों के अध्यापकों की दबावग्रस्तता एवं मूल्यों के बीच सह-संबंध का अध्ययन किया। दूबे पी. ने व्यक्तित्व विकास पर तनाव के प्रभाव का अध्ययन किया। पूर्ववर्ती साहित्य के विवेचन से यह स्पष्ट हुआ है कि अब तक महाविद्यालय स्तर पर अध्यापकों की दबावग्रस्तता एवं उनके व्यावसायिक मूल्यों को लेकर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है। अत: प्रस्तुत शोध की आवश्यकता प्रासंगिक है।

प्रस्तुत शोध में स्ववित्तपोषित शिक्षकों की दबावग्रस्तता एवं उनके व्यावसायिक मूल्यों के संबंध का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

शोध के उद्देश्य

(i) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की दबावग्रस्तता एवं उनके व्यावसायिक मूल्यों के मध्य संबंध का अध्ययन करना।

(ii) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत पुरुष शिक्षकों की दबावग्रस्तता एवं महिला शिक्षकों की दबावग्रस्तता के संबंध का अध्ययन करना।

(iii) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत पुरुष शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्यों एवं महिला शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्यों के मध्य संबंध का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ

(i) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के दबावग्रस्तता एवं उनके व्यावसायिक मूल्यों के मध्य संबंध है।

(ii) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत पुरुष शिक्षकों की दबावग्रस्तता एवं महिला शिक्षकों की दबावग्रस्तता के मध्य अन्तर है।

(iii) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत पुरुष शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्य एवं महिला शिक्षा व्यावसायिक मूल्य के मध्य अन्तर है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श

न्यादर्श सम्पूर्ण जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है तथा इससे वही परिणाम निकलते हैं जो सम्पूर्ण जनसंख्या से प्राप्त होता है। दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर से सम्बद्ध स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों को प्रस्तुत शोध के लिए जनंसख्या के रूप में परिभाषित किया गया है। समस्त स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में से 60 प्रतिशत महाविद्यालयों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन के आधार पर किया गया है। इस प्रकार कुल 80 स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों का चयन किया गया। प्रत्येक महाविद्यालय में से अध्यापकों का चयन गुच्छ (Cluster) प्रतिचयन के आधार पर किया गया। इस प्रकार 500 अध्यापकों का न्यादर्श 80 महाविद्यालयों से चयनित किया गया, जो सम्पूर्ण जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है।

प्रयुक्त उपकरण

उपलब्ध उपकरणों के विवेचन के उपरान्त इस शोध में सम्मिलित चरों को मापने के लिए निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया गया :

शिक्षक दबाबग्रस्तता मापनी

शिक्षक दबावग्रस्तता मापन हेतु बृजेश कुमार पाण्डेय द्वारा निर्मित मापनी का प्रयोग किया गया। कथन विश्लेषण के उपरान्त मापनी के अन्तिम रूप में 24 कथन रह गये। 200 अध्यापकों पर मापनी को प्रशासित करके विश्वसनीयता अर्द्ध-विच्छेद विधि से ज्ञात की गयी। विश्वसनीयता गुणांक 0.89 प्राप्त हुई, जो कि उच्च है। मापनी की वैधता ज्ञात करने हेतु विशेषज्ञों से निवेदन किया गया कि मापनी के कथनों को शिक्षक दबावग्रस्तता की परिभाषा को ध्यान में रखते हुए कथनों की विषयवस्तु की जाँच करें कि क्या मापनी के कथन वास्तव में शिक्षक दबावग्रस्तता का मापन कर रहे हैं। सभी

विशेषज्ञों ने शिक्षक दबावग्रस्तता मापनी के कथनों के प्रति अपनी शत-प्रतिशत सहमति व्यक्त की। यह उच्च वैधता की ओर इंगित करती है।

शिक्षक व्यावसायिक मूल्य मापनी

प्रस्तुत शोध में आवेष्ठित चर शिक्षकों का व्यावसायिक मूल्य के मापन हेतु प्रकाश चन्द्र शुक्ल एवं डब्ल्यू.एन. जान द्वारा निर्मित एवं मानकीकृत शिक्षक व्यावसायिक मूल्य मापनी का प्रयोग किया गया। इस मापनी में 54 कथन हैं। इसकी विश्वनीयता 0.86 पायी गयी जो उच्च है। मापनी की वैधता ज्ञात करने हेतु विशेषज्ञों से निवेदन किया गया कि मापनी के कथनों को शिक्षक व्यावसायिक मूल्य की परिभाषा को ध्यान में रखते हुए कथनों की विषयवस्तु की जाँच करें कि क्या मापनी के कथन वास्तव में शिक्षक व्यावसायिक मूल्य का मापन कर रहे हैं। सभी विशेषज्ञों ने शत-प्रतिशत सहमति जतायी। इस प्रकार मापनी की रूप वैधता उच्च पायी गयी।

प्रदत्तों का संकलन

आँकड़ों के संग्रह के लिए चुने गये प्रत्येक महाविद्यालयों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके आँकड़ों को एकत्रित किया गया। एक निश्चित तिथि को उक्त महाविद्यालय के प्राचार्य एवं अध्यापकों से सहयोग लेकर कार्य को सम्पादित किया गया। अध्यापकों को दोनों शोध उपकरण शिक्षक दबावग्रस्तता मापनी एवं शिक्षक व्यावसायिक मूल्य मापनी दिया गया और कहा गया कि ''प्रत्येक उपकरण को भरने से पहले दिये हुए आवश्यक निर्देश को आप पढ़ें और यदि कोई अस्पष्टता हो तो उसे स्पष्ट कर दिया जायेगा। आप अपने विचार स्वतंत्र रूप से व्यक्त करें। उपकरणों को भरने हेतु कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है, लेकिन शीघ्रता से उत्तर देने का कष्ट करें।'' उत्तर प्रपत्रों के संकलन के बाद प्रत्येक परीक्षण का अंकन मैनुअल में दी गयी विधि के आधार पर किया गया।

प्रयुक्त सांख्यिकी प्रविधियाँ

आँकड़ों के विश्लेषण के लिए निम्नलिखित सांख्यिकी प्रविधियों का प्रयोग किया गया है– मध्यमान, मानक विचलन, विषमता, कुकदता तथा क्रान्तिक अनुपात।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या

न्यादर्श में सम्मिलित अध्यापकों पर शिक्षक दबावग्रस्तता मापनी को प्रशासित किया गया। इसके उपरान्त प्रयुक्त उपकरण पर प्राप्त अंकों के आधार पर आवृत्ति वितरण की प्रसामान्यता (नार्मेलटी) की जाँच की गयी, क्योंकि प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु उपयुक्त

सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग प्राप्तांकों के वितरण पर निर्भर करता है। प्रसामान्यता की जाँच करने हेतु शिक्षक दबावग्रस्तता पर प्राप्त आवृत्ति वितरण से ककुदता और विषमता की गणना की गयी।

आवृत्ति वितरण से प्राप्त मध्यमान 87.5 माध्यिका 84.1, मानक विचलन 13.19, विषमता- 0.78 तथा ककुदता 0.252 है। इससे यह संकेत मिलता है कि प्राप्तांकों का वितरण सामान्य के लगभग है। न्यादर्श में सम्मिलित अध्यापकों पर शिक्षक व्यवसाय मूल्य मापनी को प्रशासित किया गया। प्राप्त अंकों के आधार पर आवृत्ति वितरण से ककुदता और विषमता मान की गणना की गयी। आवृत्ति वितरण से प्राप्त मध्यमान 82.68, माध्यिका 80.45, मानक विचलन 18.87, ककुदता 0.64 तथा विषमता 0.312 पाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राप्तांकों का वितरण लगभग सामान्य है। सभी परिकल्पनाओं की जाँच हेतु क्रान्तिक अनुपात (सी.आर.) का प्रयोग किया गया। प्रदत्तों का विश्लेषण परिकल्पना के क्रम में किया गया। प्रथम परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए सर्वप्रथम शून्य परिकल्पना बनायी गयी कि शिक्षकों के दबावग्रस्तता एवं उनके व्यावसायिक मूल्य में कोई संबंध नहीं है। इस परिकल्पना के परीक्षण हेतु अध्यापकों का दबावग्रस्तता मापनी पर प्राप्तांकों के आधार पर आवृत्ति वितरण तैयार किया गया तथा माध्यिका मान की गणना की गयी। माध्यिका मान के आधार पर शिक्षकों को दो समूहों में वर्गीकृत किया गया। माध्यिका मान से अधिक अंक पाने वाले अध्यापक का उच्च दबावग्रस्तता वाला समूह तथा माध्यिका मान से कम पाने वाले को निम्न दबावग्रस्तता वाला समूह कहा गया। शिक्षक व्यावसायिक मूल्य मापनी पर दो आवृत्ति वितरण तैयार किये गये हैं। एक उच्च दबावग्रस्ता वाला समूह तथा दूसरा निम्न दबावग्रस्तता वाला समूह। इन दोनों समूह के मध्य अन्तर की सार्थकता ज्ञात करने के लिए क्रान्तिक अनुपात ज्ञात किया गया।

तालिका-1

उच्च एवं निम्न दबावग्रस्तता वाले समूह के अध्यापकों के शिक्षक व्यावसायिक मूल्य मापनी पर प्राप्तांकों का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात मान

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात
उच्च दबावग्रस्तता	360	70.52	15.23	17.33*
निम्न दबावग्रस्तता	140	92.54	9.42	

*0.01 स्तर पर मान सार्थक।

तालिका-01 से स्पष्ट है कि प्राप्त क्रान्तिक अनुपात मान 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक अन्तर होने के लिए पर्याप्त हैं। इसके आधार पर हमारी शून्य परिकल्पना अस्वीकार हो जाती है और शोध परिकल्पना स्वीकार। हम कह सकते हैं कि निम्न दबावग्रस्तता, उच्च व्यावसायिक मूल्य को बढ़ावा दे रहा है। निम्न दबावग्रसतता वाले अध्यापकों में व्यावसायिक मूल्य अधिक होगा। हम कह सकते हैं कि शिक्षकों की दबावग्रस्तता उनके व्यावसायिक मूल्य का एक बहुत बड़ा कारक है।

तालिका-2

पुरुष एवं महिला शिक्षकों के दबावग्रस्तता प्राप्तांकों का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात मान

लिंग	*अध्यापकों की संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*सी.आर. मान*
पुरुष शिक्षकों की दबावग्रस्तता	380	68.60	12.36	4.40*
महिला शिक्षकों की दबावग्रस्तता	120	72.78	14.12	

*0.01 स्तर पर मान सार्थक।

तालिका-2 से स्पष्ट है कि लिंग एवं दबावग्रस्तता के मध्य सार्थक अन्तर है। महिला अध्यापकों में दबावग्रस्तता पुरुष अध्यापकों की तुलना में अधिक है। इसका कारण महिला शिक्षकों को घर, परिवार, समाज के साथ महाविद्यालय का भी दायित्व वहन करना होता है।

तालिका-3

पुरुष एवं महिला शिक्षकों की व्यावसायिक मूल्य मापनी पर प्राप्तांकों का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात मान

लिंग	*अध्यापकों की संख्या*	*मध्यमान*	*मानक विचलन*	*सी.आर. मान*
पुरुष शिक्षकों का व्यावसायिक मूल्य	380	54.62	16.52	
महिला शिक्षकों का व्यावसायिक मूल्य	120	52.42	12.45	1.10*

* 0.05 स्तर पर मान सार्थक।

पुरुष एवं महिला अध्यापकों के व्यावसायिक मूल्यों के प्राप्तांकों में सार्थक अन्तर नहीं है। आम धारणा है कि पुरुष एवं महिला शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्यों में अन्तर है। इसकी पुष्टि शोध से प्राप्त निष्कर्ष से नहीं हो सकी। शायद इसका कारण यह हो सकता है कि पुरुष एवं महिला शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्यों में उनकी सेवाशर्तों, शैक्षिक दशाएं तथा उत्तरदायित्व आदि में एकरूपता होती है।

निष्कर्ष

(i) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षकों के दबावग्रस्तता एवं उनके व्यावसायिक मूल्यों के बीच सार्थक संबंध है।

(ii) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत पुरुष अध्यापकों की दबावग्रस्तता एवं महिला शिक्षकों की दबावग्रस्तता के मध्य संबंध है।

(iii) स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में कार्यरत पुरुष अध्यापकों के व्यावसायिक मूल्य एवं महिला शिक्षकों के व्यावसायिक मूल्य के मध्य अन्तर नहीं है।

संदर्भ

बेस्ट, जॉन डब्ल्यू (1982) : *रिसर्च इन एजुकेशन,* नई दिल्ली, प्रिन्टिन्स हाल ऑफ इणिया, पी. टी.एल.टी.डी.।

कर्लिंगर एफ.एन. (2000), *फाउण्डेशन आफ विहैवियरल रिसर्च,* दिल्ली।

अलपोर्ट, जी.डब्ल्यू. (1931), *स्टडी ऑफ वैल्यूज,* बोस्टन हाउगटन मिफिलिन कम्पनी।

अरुण कुमार सिंह : (2002), *माडर्न एबनार्मल साइकोलाजी,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

भारद्वाज, तिलक राज (2001), *एजुकेशन ऑफ ह्यूमन वैल्यूज,* नई दिल्ली, मित्तल पब्लीकेशन।

भटनागर, आर.पी. (1963), *ए डिफरेंशियल स्टडी ऑफ वैल्यूज ऑफ मेल ग्रेजूएट, जनरल आफ एजुकेशनल एण्ड मनोविज्ञान*।

मुखीजा, जी.के. (2003), *एबनार्मल साइकोलाजी,* लख्मी नारायन अग्रवाल, आगरा।

एन.सी.ई.आर.टी. (1992), *फिफ्थ सर्वे आफ एजुकेशनल रिसर्च वाल्यूम, प्रथम और द्वितीय,* नई दिल्ली।

शुक्ला संगीता (1997), *ए स्टडी ऑफ टीचर्स प्रोफेशनल वैल्यूज एण्ड एक्जाइटी इन रिलेशन्स टू आर्गनाइजेशनल क्लाइमेट आफ द कालेज आफ कुमायूँ यूनिवर्सिटी,* अनपब्लिस्ड पी-एच.डी. थीसिस इन एजुकेशन, कुमायूँ विश्वविद्यालय।

सुलेमान, एम., (2008), *एबनार्मल साइकोलाजी,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

शोध टिप्पणी/संवाद

अधिगम और अध्यापन के परिप्रेक्ष्य में छात्र अभिप्रेरणा

विवेक कुमार*

किसी व्यक्ति से कोई कार्य कराना या उसे किसी कार्य के प्रति आकर्षित करना एक बहुत ही चुनौतिपूर्ण कार्य है। इसी प्रकार कक्षा में विद्यार्थी को इच्छित विषय का सहजतापूर्वक अधिगम कराना भी परिश्रमपूर्ण कार्य है। एक अध्यापक के लिए यह प्रश्न बहुत ही महतवपूर्ण है कि वह कक्षा में विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने हेतु किन विधियों या व्यूह (Learning Strategies) का प्रयोग करे, या फिर वह किस प्रकार अपने विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करे कि उसके विद्यार्थी पूर्ण विश्वास के साथ यह कह सकें कि ''Yes I can do what my teacher expects.'' अर्थात् उनके अंदर एक दृढ़ संकल्प का संचार हो जाय। इस प्रकार के संकल्प का संचार तभी सम्भव है जब विद्यार्थी की अभिप्रेरणा का स्तर उच्चतम हो।

अभिप्रेरणा का सम्प्रत्य

अभिप्रेरणा के सिद्धान्तों का संबंध व्यक्ति के व्यवहार की दिशा एवं क्रियाशीलता से है। Motivation शब्द की निष्पत्ति लैटिन भाषा के क्रिया शब्द Movere से हुआ है। इसका अर्थ है क्रियाशीलता (to move)।

फ्रेडरिक जे. मैक्डोनल्ड के अनुसार अभिप्रेरणा का तात्पर्य व्यक्ति के अन्दर उस उर्जा परिवर्तन से है जिसमें एक प्रभावपूर्ण उत्साह (affective arousal) एवं लक्ष्य के प्रति प्रतिक्रिया (Anticipatory goal reaction) निहित हो।

उपर्युक्त व्यक्त विचार में तीन तत्व निहित हैं–

*सहायक आचार्य, (शिक्षाशास्त्र विभाग), राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, श्री रणवीर परिसर, कोट भलवाल, (जम्मू)

(i) **उर्जा परिवर्तन** (Energy change)– उर्जा परिवर्तन मानवीय सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं जैसे– मान सम्मान इत्यादि प्राप्त करने की इच्छा पर निर्भर होता है।

(ii) **प्रभावपूर्ण/ भावात्मक उत्साह** (affective arousal)– इसके अन्तर्गत व्यक्ति किसी कार्य के प्रति सहज रूप में आकर्षित एवं उत्तेजित होता है।

(iii) **लक्ष्य के प्रति प्रत्याशित प्रतिक्रिया** (Anticipatory goal reaction)– इसमें अभिप्रेरणा के अन्तर्गत व्यक्ति ऐसी प्रतिक्रिया करता है जिससे उसे अपने इच्छित लक्ष्य की प्राप्ति हो सके।

इस आधार पर हम कह सकते हैं कि 'अभिप्रेरणा वह है जिसमें इच्छित लक्ष्य प्राप्ति के अनुकूल प्राणी द्वारा अनुक्रिया करने के पणिामस्वरूप उर्जा का परिवर्तन होता है।'

अभिप्रेरणा के सम्प्रत्यय को स्पष्ट करने हेतु अनेक मनोवैज्ञानिकों ने सराहनीय प्रयास किये हैं। जैसे– सिग्मण्ड नयड, एडलर, कार्ल जुंग एवं अब्राहम मॉसलो इत्यादि।

नयड ने व्यक्ति की अभिप्रेरणा को सर्वप्रथम उसके अचेतन (Unconcess) की इच्छाओं से जोड़ा और इसका स्रोत Id एवं Libido अर्थात कामलिप्सा को माना। किन्तु इनके बाद के विचारों से ज्ञात होता है कि व्यवहार का कारण मुख्य रूप से दो मूल प्रवृत्तियाँ – **जीवनमूल प्रवृत्तियाँ** (Life Instinct) अर्थात जीने की इच्छा एवं **मुमूर्षा मूल प्रवृत्तियाँ** (Death Instinct) अर्थात् विनाश या संहार की इच्छा हैं। जीवन मूल प्रवृत्तियाँ आनन्द (Eros) द्वारा निर्देशित होती हैं जिसमें स्व-रक्षण, सन्तानोत्पत्ति, आत्मप्रेम तथा अपना एवं समाज का विकास इत्यादि की प्रवृत्ति होती है जबकि मुमूर्षा मूल प्रवृत्तियाँ कष्ट (Thanatos) द्वारा व्यक्ति दूसरों तथा स्वयं के 'आत्म' को क्षति पहुँचाता है। फ्रायड के अनुसार अचेतन तथा अर्द्धचेतन मन, जो कि इदम् एवं अहम् में स्थित होते हैं तथा आनन्द एवं कष्ट (Eros & Thanatos) और इनके संयोग से जनित इच्छा, मानव व्यवहार को अभिप्रेरित करते हैं।

अभिप्रेरणा के लिए एडलर ने **'श्रेष्ठता संबंधी अन्तःप्रेरणा'** (Urge orstriving for Superiority) पद का प्रयोग किया। इनके अनुसार मनुष्य का लक्ष्य 'सुरक्षा' एवं 'श्रेष्ठता' प्रप्त करना है। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त व्यक्ति की 'श्रेष्ठता संबंधी अन्तः प्रेरणा ' उसके विकास की प्रत्येक अवस्थाओं में अभिव्यक्त होती रहती है और इसके प्रकट होने के अनेक रचनात्मक एवं कलात्मक तरीके देखने को मिलते हैं। इस प्रकार

प्रत्येक व्यक्ति 'पूर्णता की प्राप्ति' हेतु विशिष्ट शैली अपना लेता है और उसके अनुसार ही अपना आचरण प्रदर्शित करता है।

अभिप्रेरणा को स्पष्ट करने हेतु जुंग ने '**मनोवैज्ञानिक उर्जा**' (psychic energy) पद का प्रयोग किया।इनके अनुसार व्यक्ति की यह उर्जा उसकी वास्तविक एवं सम्भाव्य शक्तियों के रूप में प्रकट होती है। वास्तविक अभिव्यक्ति जैसे– कोई इच्छा रखना, कुछ संकल्प करना, किसी वस्तु पर ध्यान देना, कोई अन्तःप्रेरणा इत्यादि एवं सम्भाव्य अभिव्यक्ति जैसे- स्वभाव, अभिक्षमता, प्रवृत्तियाँ तथा अभिवृत्तियाँ आदि। जुंग ने दो प्रकार के व्यक्तित्व को माना है–

(i) अन्तर्मुखी व्यक्तित्व

(ii) बहिर्मुखी व्यक्तित्व

इनके अनुसार अन्तर्मुखी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति की अभिप्रेरणा 'आत्मकेन्द्रित' होती है एवं बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति की अभिप्रेरणा 'बाह्य निर्देशित' होती है।

इसी प्रकार अब्राहम मॉसलो ने भी Hierarchy of needs के सिद्धान्त में पाँच प्रकार की आवश्यकताओं के विषय में वर्णन किया है। इनके अनुसार प्राणी की उच्चस्तरीय आवश्यकता को प्रेरित करने से पहले यह अपेक्षित है कि उसकी निम्न स्तरीय आवश्यकताओं को संतुष्ट किया जाय। इसमें सबसे पहले शरीर क्रियात्मक आवश्यकताएं (Physiological needs) आती हैं। इन्हें आधारभूत प्रेरक माना जाता है। इसके अन्तर्गत प्रायः भूख, प्यास, नींद, काम इत्यादि आते हैं। सबसे पहले इनकी संतुष्टि आवश्यक है। इसके पश्चात् सुरक्षा की आवश्यकता (Safety needs) आता है। व्यक्ति की शरीर क्रियात्मक आवश्यकताओं की संतुष्टि के पश्चात ही इनका अभ्युदय होता है। इसके बाद संबंधों की आवश्यकता (Needs of Belongingness) होती है। उपर्युक्त दोनों आवश्यकताओ की संतुष्टि हो जाने पर सम्बंधों की आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति प्रायः देखा जा सकता है। इसी प्रकार सम्मान की आवश्यकता (Esteem needs) तथा उसके पश्चात् आत्म सिद्धि की आवश्यकता (Needs of Self actualization) की अभिव्यक्ति होती है। प्रभावी शिक्षण हेतु इस धारणा का विशेष महत्व है। अध्यापक को चाहिए कि वह अपने विद्यार्थियों की निम्न स्तरीय आवश्यकतओं को संतुष्ट करने का प्रयास करे जिससे वे अपने शैक्षिक लक्ष्य, उपलब्धि, सम्मान एवं आत्मसिद्धि की ओर बढ़ सकें।

छात्र अभिप्रेरणा

अब हम अपने मूल प्रश्न पर आते हैं कि विद्यार्थियों को सहज अधिगम हेतु कैसे अभिप्रेरित किया जा सकता है। इसके लिए अध्यापक को अपने विद्यार्थियों से संबंधित कुछ प्रश्नों का समाधान करना होगा। जैसे- **विद्यार्थी चाहता क्या है?** अर्थात् विद्यार्थी के जीवन का लक्ष्य क्या है? उसकी रुचि किसमें है या उसके क्षमतानुसार उसके लिए कौन-सा कौशल उपयुक्त है। यदि अध्यापक इन बातों का पता लगाये और इसी के अनुसार विद्यार्थी के लिए शिक्षा का प्रबंध करे तो वह सहज रूप से अधिगम द्वारा अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। अत: सबसे पहले यह आवश्यक है कि विद्यार्थियों में सीखने की आवश्यकता (need of Learning) को उत्पन्न किया जाय। इसके लिए अध्यापक को अपने कौशल का इस प्रकार उपयोग करना चाहिए जिससे विद्यार्थी यह महसूस करने के लिए बाध्य हो जायें कि उन्हें विषय या प्रकरण को सीखने की अत्यन्त आवश्यकता है।

अगला प्रश्न है कि **कक्षा में विद्यार्थी को क्या अभिप्रेरित कर सकता है?** इसके अन्तर्गत विचारणीय है कि कक्षा का वातावरण किस प्रकार का है। अध्यापक कक्षा में कौन-सी शिक्षण विधि का प्रयोग कर रहा है एवं उसकी अध्यापन शैली कैसी है। यदि अध्यापक यह ज्ञात कर ले कि विद्यार्थी कक्षा में किस शिक्षण विधि से प्रभावित हो रहा है या कौन-सी अध्यापन शैली उसे अधिक रुचिकर लग रही है तो वह उसे ही कक्षा में प्रयोग करेगा जिससे विद्यार्थी अधिगम हेतु सहज ही अभिप्रेरित हो सकता है।

अगला विचारणीय प्रश्न यह है कि **क्या विद्यार्थी यह जानते हैं कि उन्हें लक्ष्य प्राप्ति हेतु क्या करना चाहिए?** कभी कभी विद्यार्थी यह निश्चित नहीं कर पाते कि उन्हें क्या करना है अर्थात् उनके जीवन का उद्देश्य क्या है, वो किस लिए पढ़ रहे हैं अर्थात् लक्ष्य का निर्धारण नहीं कर पाते। इसके साथ ही कभी-कभी विद्यार्थी अपने आकांक्षा स्तर को अवास्तविक ढ़ंग से (unrealistic manner) में काफी ऊँचा निर्धारित कर लेते हैं जिसे वे प्राप्त नहीं कर पाने की स्थिति में कुंठा एवं तनाव का शिकार हो जाते हैं। जिसके कारण शिक्षा में उनकी अभिरुचि भी समाप्त हो सकती है। यहाँ अध्यापक का यह दायित्व है कि वह विद्यार्थी की counseling करके उसे उसकी योग्यतानुसार लक्ष्य निर्धारित करने में सहायता करे। एक बार विद्यार्थी यदि अपने लिए उचित लक्ष्य का निर्धारण कर ले एवं इस हेतु संकल्पित हो जाये तो वह लक्ष्य प्राप्ति हेतु सहज ही अभिप्रेरित भी हो जायेगा।

अगला विचारणीय प्रश्न यह है कि **विद्यार्थी अपने इच्छित लक्ष्य को कैसे प्राप्त कर सकता है?** यदि अध्यापक पूर्व के तीनों प्रश्नों का समुचित रूप से समाधान कर लेता है तो वह विद्यार्थी को अभिप्रेरित कर उसे उसके लक्ष्य तक अवश्य ही पहुँचा सकता है।

यदि विद्यार्थी के जीवन के लक्ष्य एवं उसकी रुचियों की जानकारी हो जायेगी तब अध्यापक उसके अनुरूप पाठ्यक्रम, शिक्षण व्यूह, शिक्षण विधि, अध्यापन शैली इत्यादि का प्रयोग करके उसे अपने लक्ष्य के प्रति अभिप्रेरित कर सकता है।

विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने हेतु कुछ सुझाव प्रस्तुत हैं–

- **विषयों का संतुलन :** अधिगम हेतु विषय का चयन योग्यता के अनुसार ही होना चाहिए। विषय ना अधिक सरल हो और ना ही अधिक कठिन हों। वह विद्यार्थियों की योग्यता एवं रुचियों के अनुसार संतुलित होना चाहिए।
- **क्रियाकलाप आधारित अधिगम :** सूचनाओं को याद करना नीरस होता है। इसके स्थान पर पहेली सुलझाना, समस्याओं के समाधान खोजना इत्यादि रुचिकर हो सकता है। अतः क्रियाकलाप तथा प्रोजेक्ट आदि के माध्यम से शिक्षण को अधिक स्थान देना चाहिए।
- **विद्यार्थियों को अपना शत-प्रतिशत प्रयास करने हेतु प्रोत्साहन :** विद्यार्थियों को इस प्रकार प्रेरित करना चाहिए जिससे वे स्वयं से ही प्रतिस्पर्धा करें। अर्थात् हर बार बेहतर करने का प्रयास करें।
- **अमूर्त अधिगम को वास्तविक परिस्थितियों से जोड़ना :** व्यक्तिवृत्त अध्ययन द्वारा अध्यापक अमूर्त अधिगम के सिद्धान्तों को समाज की वास्तविक परिस्थितियों से जोड़ सकता है। इससे विद्यार्थी को व्यवहारिक ज्ञान होने के साथ ही विषय के प्रति रुचि एवं व्यवहारिक दृष्टिकोण भी उत्पन्न होगा।
- **सामाजिकता का विकास :** अध्ययन हेतु विद्यार्थियों के कुछ समूहों का निर्माण किया जा सकता है। इसके साथ ही अध्ययन के बिन्दुओं को उनमें विभक्त कर दें। जब सभी विद्यार्थी मिलकर किसी विषय को तैयार करेंगे तो विषय के विस्तृत ज्ञान के साथ ही अनेक दृष्टिकोण एवं सामाजिकता की भावना का भी विकास होगा।

- **गहन अध्ययन :** जब विद्यार्थी अभिप्रेरित होगा और किसी विषय में अपनी रुचि प्रस्तुत करेगा तो वह उस विषय का अध्ययन गहनता से करने का प्रयास भी करेगा। गहन अध्ययन से उसमें यह क्षमता भी विकसित होगी कि जिस प्रकरण का वह अध्ययन कर रहा है उसको अन्य प्रकरण के साथ कैसे समायोजित करे।

निष्कर्ष

आज हमारे समाज का वातावरण विषम है। अनेक प्रकार की सामाजिक एवं सांवेगिक समस्याओं के कारण विद्यार्थियों एवं किशोरों में भटकाव की स्थिति दिख रही है। किशोरों एवं विद्यार्थियों को उचित दिशा में अभिप्रेरित करने हेतु कुशल निर्देशन की आवश्यकता है। उचित दिशा निर्देश द्वारा उन्हें लक्ष्य प्राप्ति हेतु अभिप्रेरित किया जा सकता है। कुशल निर्देशन के साथ ही समाज का भी यह नैतिक दायित्व है कि हम अपनी भावी पीढ़ी को ऐसा वातावरण प्रदान करें जिसमें उनका सामाजिक, सांवेगिक एवं सर्वांगीण विकास हो सके तथा वे अपने लक्ष्य की ओर निर्भय होकर बढ़ सकें।

संदर्भ

पाण्डेय के.पी., (2013), *नवीन शिक्षा मनोविज्ञान,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

सिंह अरुण कुमार, (2018), *शिक्षा मनोविज्ञान,* भारती भवन पब्लिशर्स, पटना

सिंह चन्द्रदेव, (1985) *प्राचीन भारतीय समाज और चिन्तन,* अभिनव प्रकाशन, लखनऊ

सारस्वत मालती, (2011), *शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा,* आलोक प्रकाशन लखनऊ

जायसवाल सीताराम, (2005), *व्यक्तित्व का मनोविज्ञान,* विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा

सक्सेना राधारानी, (2009), इंदिरा रानी, *शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श,* राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

सिंह उदय प्रताप, लालबहादुर सिंह, बालानन्द सिन्हा, (1991) *समाज मनोविज्ञान,* बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना,

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 25, अंक 1, अप्रैल 2018

समीक्षा लेख

सामाजिक शोध अध्ययन में शोध प्रविधि का प्रयोग

कृष्ण कुमार केशरवानी* एवं **जय प्रकाश सिंह***

वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा, **रिसर्च मेथडॉलॉजी,** प्रकाशक–पंचशील प्रकाशन, जयपुर छठा संस्करण, वर्ष : 2011, ISBN : 978–81–7056–234–4, मूल्य 1195/– रुपये. सजिल्द (पुस्तकालय संस्करण) प्रति

प्रस्तावना

सामाजिक शोध प्रविधि को समझने से पहले हमें शोध के अर्थ को समझना अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य एक बौद्धिक एवं चिंतनशील प्राणी है, जो अपनी जिज्ञासाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति एवं प्रकृति के कारण वह समाज में घटित विभिन्न प्रकार की घटनाओं के आधार पर अनेंकों प्रकार के प्रश्नों को खड़ा करता है और उन प्रश्नों के उत्तरों को स्वयं ही खोजने का प्रयास करता है, जिसकी पूर्ति शोध के माध्यम से होती है। सामाजिक शोध अथवा अनुसंधान की प्रविधियों में वैज्ञानिक प्रक्रिया में मूलत: शोध के उद्देश्य एवं परिकल्पनाओं को वैज्ञानिक विधि की प्रक्रियाओं के उपयोग के द्वारा किसी भी विषय क्षेत्र में नवीन ज्ञान की खोज अथवा पुराने ज्ञान के पुन: परीक्षण या किसी वैज्ञानिक विधि से विश्लेषण के संमकों/प्रश्नों के उत्तरों के खोज एवं ज्ञात करने की विधि से प्राप्त परिणामों के नवीन तथ्यों को ही शोध प्रविधि (Research Methodology) कहते हैं।

शोध एक सतत् क्रमबद्ध व्यवहारिक एवं सैद्धांतिक प्रयोग की वैज्ञानिक प्रक्रिया है, इसमें निरंतरता, तार्किकता, योजनाबद्धता, प्रमाणिकता, क्रमबद्धता, सुसंगता एवं अद्यतनता पायी जाती है। शोध सामाजिक विज्ञान एवं प्राकृतिक विज्ञान दोनों ही विषय क्षेत्रों में होता

*सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष, केन्द्रीय पुस्तकालय, डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

है। जब कोई शोध सामाजिक विज्ञान विषयों के क्षेत्र में होता है, तो उसे सामाजिक शोध कहा जाता है तथा जब कोई शोध प्राकृतिक एवं जीव विज्ञान विषयों के क्षेत्र में होता है, तो उसे वैज्ञानिक शोध कहा जाता है, क्योंकि किसी भी शोध अध्ययन कार्य के निष्कर्षों को वैज्ञानिक विधियों/शोध प्रविधियों के माध्यम से ज्ञात किया जाता है। वैज्ञानिक विधियों से तात्पर्य यह है कि किसी भी सामाजिक शोध के अध्ययन कार्य को पूर्ण करने के लिये एक सैद्धांतिक तर्कसंगत शोध प्रक्रिया का प्रयोग आवश्यक होता है।

वैज्ञानिक एवं सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा

शोध की वैज्ञानिक पद्धति की परिभाषा को अनेंकों विद्वानों ने अपने-अपने मतों के अनुसार निम्नानुसार परिभाषित किया है :

पिर्यसन (1911) का मानना है कि सत्य तक पहुँचने के लिये कोई लघु मार्ग नहीं है, विश्व का ज्ञान प्राप्त करने के लिये वैज्ञानिक पद्धति के द्वार से गुजरने के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है।

रीड (1999) का मानना है कि शोध हमेशा वह नहीं होता जिसे आप वैज्ञानिक कह सकें, लेकिन शोध कभी-कभी उपयोगी जानकारी एकत्रित करने तक ही सीमित हो सकता है। बहुत-सी ऐसी जानकारी किसी विशेष कार्य का नियोजन करने एवं महत्वपूर्ण निर्णयों को लेने के लिये बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। इस प्रकार के अनुसंधान कार्य में एकत्रित की गयी सामग्री निरंतर वैज्ञानिक सिद्धान्त को निर्माण की ओर ले जा सकती है।

वोल्फ (1925) का मानना है कि व्यापक अर्थ में कोई भी अनुसन्धान पद्धति जिसके द्वारा विज्ञान का निर्माण हुआ हो अथवा उसका विस्तार किया जा रहा हो, वैज्ञानिक पद्धति कहलाती है, इसलिये इन्होंने अनुसन्धन पद्धति को ही वैज्ञानिक विधि कहा है।

शोध की सामाजिक अनुसंधान पद्धति की परिभाषा को भी अनेकों विद्वानों ने अपने-अपने मतों के अनुसार निम्नानुसार परिभाषित किया है :

यंग (1960) का मानना है कि सामाजिक अनुसंधान को ऐसे वैज्ञानिक प्रयत्न के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसका उद्देश्य तार्किक एवं क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यों की खोज अथवा पुराने तथ्यों की परीक्षा और सत्यापन, उनके क्रमों, पारस्परिक सम्बन्धों, कार्य-कारण की व्याख्या एवं उन्हें संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करता है।

मोजर (1961) का मानना है कि सामाजिक अनुसंधान घटनाओं और समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिये अन्वेषण कार्य को हम सामाजिक अनुसंधान अथवा शोध कहते हैं।

सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्य

सामाजिक अनुसंधान के अनेंकों उद्देश्य हैं, इनका प्राथमिक उद्देश्य चाहे वह तात्कालिक अथवा दूरस्थ सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को समझना और उस नियंत्रण पाना प्रमुख है। गुडे एवं हॉट तथा पी.वी. यंग के अलावा और भी अनेकों विद्वानों ने इसके उद्देश्यों को वर्गीकृत किया है। गुडे एवं हॉट (1952) ने सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्यों को दो भागों में वर्गीकृत किया है– एक : सैद्धान्तिक अनुसंधान एवं दूसरा : व्यावहारिक अनुसंधान। सैद्धान्तिक सामाजिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य नये तथ्यों को ज्ञात करना, सिद्धान्त की जाँच करना, अवधारणात्मक प्रमाणिकता में सहायक होना और उपलब्ध सिद्धान्तों को एकत्रित करने की विधियों से संबंधित है। व्यावहारिक सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य व्यावहारिक समस्याओं के कारणों को ज्ञात करने और उनके समाधानों का पता लगाने के नीति निर्धारण के लिये आवश्यक सुधार करने में सहायक होता है।

यंग (1960) ने सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए लिखा है सामाजिक अनुसंधान का मूलभूत उद्देश्य चाहे वह तत्कालीन हो या दीर्घकालीन वह सामाजिक जीवन को समझने और ऐसा करके उस पर अधिक नियंत्रण प्राप्त करने में सहायक होता है, क्योंकि सामाजिक शोधकर्ता न तो व्यावहारिक समस्याओं एवं तात्कालिक सामाजिक नियोजन अथवा सामाजिक सुधार से संबंधित होता है। वह प्रशासकीय परिवर्तनों एवं प्रक्रियाओं के विश्लेषण संबंधित नहीं होता, बल्कि वह अपने को जीवन और कार्य कुशलता एवं कल्याण के पूर्व स्थापित मापदण्डों के आधार पर निर्देशित भी नहीं करता है तथा सामाजिक घटनाओं को सुधार की दृष्टि से इन आँकड़ों के मापदण्डों को मापता भी नहीं है। सामाजिक शोधकर्ता की मुख्य अभिरुचि सामाजिक प्रक्रियाओं की खोज, व्याख्या, व्यवहार के प्रतिमानों एवं विशेष सामाजिक घटनाओं तथा सामान्यत: सामाजिक समूहों में लागू होने वाली समानताओं एवं असमानताओं में होती है।

सामाजिक अनुसंधान के कुछ अन्य उद्देश्यों में पुराने तथ्यों/समकों का परीक्षण कर नये तथ्यों/समकों को अद्यतन एवं पुर्न:वर्द्धित कर विभिन्न चरों एवं सहचरों के मध्य कार्य संबंधों को ज्ञात करना, ज्ञान का विस्तार करना, सामान्यीकरण करना एवं प्राप्त ज्ञान के आधार पर सिद्धान्त का निर्माण करने संबंधी प्रक्रियाओं से है। सामाजिक अनुसंधान से प्राप्त सूचनाएँ सामाजिक नीति निर्माण या सामाजिक जीवन की गुणवत्ता में सुधार या सामाजिक समस्याओं के समाधान में सहायक हो सकती हैं। व्यावहारिक सिद्धान्त की दृष्टि से यदि इसे देखा जाये तो इसे उपयोगितावादी कहा जायेगा।

सामाजिक अनुसंधान के सोपान

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक होती है। वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति से अभिप्राय यह है कि शोध में समस्या विशेष का अध्ययन एक व्यावहारिक पद्धति के द्वारा किया जाता है और शोध अध्ययन के निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है कि उसकी वैषयिकता के स्थान पर वस्तुनिष्ठता होती है। अनुसंधान की पूर्ण प्रक्रिया शोध प्रविधि के विभिन्न सोपानों में होती है। सामाजिक अनुसंधान की प्रक्रिया को एक सोपान से दूसरे सोपान में प्रवेश करते हुये शोध अध्ययन को पूर्ण किया जाता है। सामाजिक अनुसंधान में भी कितने सोपान होते हैं, इसमें भी विद्वानों में काफी मतभेद हैं, इस कारण से अनुसंधान में सोपानों की पदावलियों को भी विद्वानों ने पृथक-पृथक तरह से नामांकित किया है। सामाजिक अनुसंधान के मध्य कुछ सोपान आगे-पीछे हो सकते हैं, इससे अनुसंधान की वैज्ञानिकता पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है। इसी प्रकार विभिन्न प्रकार के विद्वानों के सोपानों के आधार पर वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा (2011: छठा संस्करण) ने रिसर्च मेथडॉलॉजी की विषय-सूची के सोपानों को 35 अध्यायों में निम्नानुसार विभक्त किया है :

1. विज्ञान और वैज्ञानिक पद्धति (Science and Scientific Method),
2. सामाजिक अनुसंधान : अर्थ एवं प्रकृति (Social Research : Meaning and Research),
3. सामाजिक अनुसंधान के प्रकार (Types of Social Research),
4. सामाजिक अनुसंधान की प्रक्रिया (Process of Social Research),
5. अनुसंधान समस्या का चयन एवं निरूपण (Selection and Formulation of Research Problem),
6. प्रतिरूप एवं पैराडाइम (Models and Paradigms),
7. सिद्धान्त निर्माण (Theory-Paradigms),
8. तथ्य एवं सिद्धांत : परिभाषाएँ एवं अन्त: सम्बन्ध (Fact and Theory : Definitions and Interrelations),
9. अनुसंधान प्ररचना (Research Design),
10. अवधारणा (Concept),
11. प्राक्कल्पना (Hypothesis),
12. चर, वाक्य विन्यास, परिभाषाएँ, स्वयं सिद्धियाँ और मान्यताएँ (Variables, Constructs, Definitions, Postulates and Assumptions),
13. निदर्शन (Sampling),

14. सामग्री : प्रकार एवं स्रोत (Data : Types and Sources),
15. अवलोकन (Observation),
16. साक्षात्कार (Interview),
17. अनुसूची (Schedule),
18. प्रश्नावली (Questionnaire),
19. अध्ययन के विभिन्न प्रकार : पेनल, केस एवं क्षेत्रीय (Various Forms of Studies: Panel, Case and Area),
20. अन्तर्वस्तु विश्लेषण (Content Analysis),
21. प्रक्षेपी प्रविधियाँ (Projective Techniques),
22. सामग्री का विश्लेषण : सम्पादन, गुण-स्थान, वर्गीकरण, संकेतीकरण एवं सारणीयन (Data Analysis : Editing, Property Space, Classification, Codification and Tabulation),
23. सामग्री का विश्लेषण : विश्लेषण, व्याख्या एवं प्रतिवेदन-लेखन (Data Analysis : Analysis, Explanation and Report-Writing),
24. सामाजिक सांख्यिकी : विशेषताएँ, उपयोगिताएँ एवं सीमाएँ (Social Statistics : Characteristics, Uses and Limitations),
25. सांख्यिकीय माध्य : समान्तर माध्य, भूयिष्ठक (बहुलक) तथा माध्यिका (Statistical Averages : Mean, Mode and Median),
26. सूचकांक (Index Number),
27. काई-वर्ग परीक्षण (Chi-Square Test),
28. समंकों का चित्रमय प्रदर्शन (Diagrammatic Presentation of Statistical Data),
29. प्रमापन प्रविधियाँ (Scaling Techniques),
30. अन्वेषण के तर्क, मूल्य और सामाजिक विज्ञान (Logic of Inquiry, Values and Social Sciences),
31. कम्प्यूटर और अनुसंधान (Computer and Research),
32. रेखाचित्र एवं आवृत्ति चित्र (Graphs and Histograms),
33. अपकिरण (Disperson),
34. सांख्यिकीय विश्लेषण : सहसम्बन्ध (Statistical Analysis : Correlation),

35. प्रसरण एवं सहप्रसरण का सांख्यिकीय विश्लेषण (Statistical Analysis of Variance and Covariance).

रिसर्च मेथडॉलॉजी की पुस्तक के उपरोक्त विभिन्न अध्यायों में उपलब्ध वैज्ञानिक एवं सामाजिक अवधारणाओं, सिद्धान्तों, उपकल्पनाओं, सांख्यिकीय विधियों, विश्लेषण, निर्दशन, प्रमापन प्रविविधयाँ, प्रश्नावली, साक्षात्कार, अनुसूची, समंकों का चित्रमय प्रदर्शन, एवं रेखाचित्रों तथा आवृत्ति चित्रों आदि के प्राकृतिक विज्ञानों एवं सामाजिक विज्ञानों की पद्धति के सोपानों की वैज्ञानिक एवं सामाजिक प्रकृति का शोध अध्ययन निम्नानुसार विज्ञान की पद्धति को आधार मानकर एवं सामाजिक विज्ञानों की विशेषताओं, तत्वों, लक्षणों तथा अध्ययन की पद्धतियों का विज्ञान की प्रकृति से तुलना करते हुये वास्तविक अध्ययन की सभी प्रक्रियाओं के साथ किया जायेगा।

वैज्ञानिक शोध पद्धति के प्रक्रियात्मक सोपान

सामान्यत: प्राकृतिक विज्ञान संबंधी शोध में एक वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर निम्नांकित सोपानों की विवेचना करना आवश्यक है :

1. **समस्या का चयन** (Selection of the Problem) : सांसारिक घटनाएं एवं समस्यायें असंख्य है। वैज्ञानिक शोधकर्ता को अपने विषय, ज्ञान, उपलब्ध साहित्य एवं क्षमता आदि के आधार पर सर्वप्रथम समस्या का चयन करना होता है कि वह किस समस्या का अध्ययन करना चाहता है।
2. **उद्देश्यों का निर्धारण** (Determination of Objectives) : वैज्ञानिक शोध अध्ययन की प्रक्रिया का दूसरा महत्वपूर्ण सोपान समस्या से संबंधित उद्देश्यों को निश्चित करने से है अर्थात् किसी भी शोध अध्ययन को प्रारम्भ करने से पहले उस अध्ययन के उद्देश्यों को निश्चित करना अत्यन्त आवश्यक होता है, किन्तु यह अवधारणा वैज्ञानिक पद्धति पर लागू नहीं होती है।
3. **उपकल्पना का निर्माण** (Formulation of Hypothesis) : वैज्ञानिक पद्धति में शोध अध्ययन उपकल्पनाओं से आरम्भ होता है, यह एक कच्चा सिद्धान्त होता है, जिसकी सत्यता का परीक्षण वैज्ञानिक अध्ययन द्वारा किया जाता है और यह सत्य एवं सही पाये जाने पर एक प्रमाणिक सिद्धान्त बन जाता है।
4. **अध्ययन क्षेत्र का चयन** (Selection of the Universe) : वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार उपकल्पना के निर्माण के बाद ऐसे अध्ययन क्षेत्र का चयन किया जाता है, जिसमें उपकल्पना से संबंधित तथ्य उपलब्ध हों। उपकल्पना की सत्यता को परखने के लिये अध्ययन क्षेत्र का चयन एक महत्वपूर्ण सोपान है।

5. **प्रविधियों का चयन** (Selection of Techniques) : वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार शोध अध्ययन के क्षेत्र से संबंधित तथ्यों का संकलन करने के लिये अनेकों प्रविधियों एवं यंत्रों का उपयोग समस्या चयन या उपकल्पनाओं की प्रकृति एवं संबंधित कारकों, तथ्यों और उसकी परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

6. **अवलोकन** (Observation) : गुडे एवं हॉट ने अभिव्यक्त किया है कि वैज्ञानिक अध्ययन अवलोकन से प्रारम्भ होता है और अपनी प्रमाणिकता के लिये अवलोकन पर ही आकर समाप्त होता है। अत: अवलोकन के द्वारा ही वैज्ञानिक तथ्यों की सत्यता का पता लगता है कि वह कैसे अवलोकन करेगा आदि का पता लगता है।

7. **तथ्य संकलन** (Collection of Data) : वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार तथ्य संकलन का कार्य बहुत ही महत्वपूर्ण एवं अध्ययन का सबसे मुख्य आधार है। इसमें तथ्यों का संकलन करते समय अनेक बातों को ध्यान में रखा जाता है। वैज्ञानिक को तथ्य निष्पक्ष रूप से एकत्रित करने चाहिये, यदि तथ्य पक्षपातपूर्ण रूप से एकत्रित किये जायेगें तो वह अध्ययन वैज्ञानिक नहीं कहलायेगा।

8. **तथ्यों का वर्गीकरण** (Classification of Data) : वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार शोध अध्ययन में उपकल्पना की सत्यता का परीक्षण तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि तथ्यों का उनके गुण संबंधों के आधार पर उनका वर्गीकरण नहीं किया जाये, इसलिये वैज्ञानिक पद्धति में तथ्यों का वर्गीकरण अत्यन्त आवश्यक है।

9. **सामान्यीकरण** (Generalization) : वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार शोध अध्ययन का महत्वूपर्ण सोपान सामान्यीकरण अथवा उपकल्पना के परीक्षण का प्रमुख सोपान है, इसे अनेकों नामों से पुकारा जाता है, जैंसे– निष्कर्ष, सुझाव, उपसंहार, सामान्यीकरण एवं नियमों का प्रतिपादन आदि इस सोपान के नामकरण पर आधारित होते हैं।

10. **प्रतिवेदन** (Report) : गुडे एवं हॉट ने लिखा है कि वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार किया गया शोध अध्ययन सामान्यीकरण एवं सैद्धान्तिकरण पर ही समाप्त नहीं होता है, बल्कि शोध अध्ययन की पूर्ण प्रक्रिया को जस का तस लिखना अत्यन्त आवश्यक है, इसे अनुसंधानकर्ता के लिये प्रतिवेदन के रूप में समस्या के चयन से लेकर उपकल्पना की सत्यता के परीक्षण तक को जो कुछ उसने किया है, उसे उसी प्रकार से लिपिबद्ध कर देना चाहिये, इत्यादि। कार्ल पियर्सन ने इसके

महत्व को अभिव्यक्त करते हुये लिखा है कि सत्य तक पहुँचने के लिये कोई संक्षिप्त मार्ग नहीं है। विश्व का ज्ञान प्राप्त करने के लिये वैज्ञानिक पद्धति के द्वार मार्ग के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं है।

सामाजिक विज्ञान शोध पद्धति के प्रक्रियात्मक सोपान

सामान्यत: सामाजिक विज्ञानों से संबंधी शोध में एक वैज्ञानिक पद्धति की प्रकृति के आधार पर निम्नांकित सोपानों की विवेचना करना आवश्यक है:

1. **वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग** (Use of Scientific Method) : सामाजिक विज्ञानों में समाज, सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक व्यवस्थाओं, घटनाओं आदि का अध्ययन वैज्ञानिक पद्धति की प्रकृति के द्वारा शोध अध्ययन की पूरी योजना को तैयार करने के साथ प्रारम्भ किया जाता है। यह सामाजिक विज्ञानों में तथ्यों को एकत्रित करने का सबसे प्रमुख सोपान है, इसमें वैज्ञानिक विधियों एवं उपकरणों, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नावली, समाजमिति, सामाजिक सर्वेक्षण विधि, वैयक्तिक ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति आदि का प्रयोग किया जाता है और तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण करने में सांख्यिकीय पद्धतियों, जैंसे– प्रतिशत, औसत, विचलन आदि का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार के शोध में अधिकांशत: प्रयोगात्मक पद्धति का प्रयोग किया जाता है, इसी आधार पर शोध अध्ययन की पद्धति के आधार पर सामाजिक विज्ञानों की प्रकृति पूर्णत: वैज्ञानिक है।
2. **अवलोकन** (Observation): सामाजिक विज्ञान अनुसंधान में वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति की प्रकृति के अनुसार तथ्य संकलन के सोपान का बहुत ही महत्व है। प्राकृतिक विज्ञानों में अवलोकन विधि की सहायता से तथ्य एकत्रित किये जाते हैं: एक– सहभागिक, दूसरा– अर्द्ध सहभागिक एवं तीसरा– असहभागिक।
3. **तथ्यों का विश्लेषण** (Analysis of Data): सामाजिक विज्ञान अनुसंधानों में अवलोकन के द्वारा तथ्य को एकत्रित करने के बाद उनके कार्यों को अलग-अलग वैज्ञानिक अध्ययनों के आधार पर तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीयन, और विश्लेषण किया जाता है और उनके परस्पर गुण-संबंध का वर्णन किया जाता है।
4. **सामान्यीकरण** (Generalization): वैज्ञानिक अध्ययन एवं सामाजिक विज्ञानों में सामान्यीकरण प्रमुख रूप से अन्तिम सोपान होता है। इसमें प्रथम सोपान के रूप में उपकल्पना का निर्माण कर, उसकी जाँच की जाती है तथा तथ्यों का सामान्यीकरण किया जाता है।

5. **क्या है? का अध्ययन** (Studies 'What is it?) : आर.के. मुखर्जी के अनुसार सत्यता को जानने के लिये अनुसंधान में निम्न 5 मौलिक प्रश्नों की घटनाओं का अध्ययन में उत्तर आवश्यक होता है :
   - क्या है? (What is it ?)
   - कैंसे है? (How is it ?)
   - क्यों है? (Why is it ?)
   - क्या होगा? (What it bill be ?)
   - क्या होना चाहिये? (What should it be)

   सामाजिक विज्ञानों में सामाजिक क्रियाओं– क्या है?, कैसे है?, क्यों है?, और क्या होगा? को ध्यान में रखकर घटना तथ्यों के अध्ययन की विवेचना एवं व्याख्या की जाती है। लेकिन कुछ वैज्ञानिक क्या होना चाहिये? को भी महत्व देते हैं।

6. **कार्य-कारण सम्बन्धों की व्याख्या** (Explains Cause-Effect Relations) : सामाजिक विज्ञानों में कारकों का अध्ययन किया जाता है, जिसमें घटना के परिणामों के कारणों की खोज की जाती है, कोई घटना किन-किन कारणों से घटती है, इसका वर्णन किया जाता है।

7. **सिद्धान्तों का निर्माण** (Constructs Theory) : सामाजिक विज्ञान अनुसंधान में उपकल्पना का निर्माण, तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण, सारणीयन, संगठन, विश्लेषण और व्याख्या आदि की जाती है तथा अन्त में सिद्धान्त का निर्माण किया जाता है।

8. **सिद्धान्तों की जाँच** (Tests Theories) : सामाजिक विज्ञान अनुसंधान में सिद्धान्तों की जाँच का परीक्षण इतिहास के प्रमाण के आधार पर ज्ञात किया जाता है और सामाजिक वैज्ञानिक सिद्धान्तों का परीक्षण, तथ्यों के आधार पर प्रमाणित सिद्ध नहीं होते, बल्कि वे तथ्यों में परिमार्जन एवं संशोधन को सुनिश्चित करते हैं।

9. **सिद्धान्त की सार्वभौमिकता** (Universality of Theory) : प्राकृतिक विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान के सिद्धान्त सार्वभौमिक होते हैं और ये सिद्धान्त निश्चित परिस्थितियों में कारकों के परस्पर कारण के प्रभाव संबंधों की व्याख्या करते हैं। अत: सामाजिक विज्ञान अनुसंधान के सोपानों के अनुसार तथ्यों का अध्ययन करके सिद्धान्तों का निर्माण करते हैं, जिससे इनकी जाँच करने में सुविधा एवं सरलता होती है।

10. भविष्यवाणी की क्षमता (Capability of Forecast) : सामाजिक विज्ञान क्या है? का अध्ययन करता है तथा उसके आधार पर क्या होगा? की भविष्यवाणी करता है, इसलिये इन विज्ञानों की प्रकृति वैज्ञानिक है। इस पर मेक्स वेबर ने कहा है कि घटना के अध्ययन में उसके घटनाक्रम के इतिहास का अध्ययन करना चाहिये। इन्होंने समाजशास्त्र की परिभाषा में भी स्पष्ट किया है कि समाजशास्त्र घटना का अध्ययन करके आगे बढ़ने वाली स्थिति या परिणाम की भविष्यवाणी करता है। समाजशास्त्री क्या है? के आधार पर क्या होगा? – निष्कर्ष में व्यक्त करता है।

निष्कर्ष

रिसर्च मेथडॉलॉजी की उपरोक्त विस्तृत समीक्षा के परिप्रेक्ष्य में निष्कर्ष यह है कि सामाजिक विज्ञानों के अनुसंधान में वैज्ञानिक पद्धति की प्रकृति सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करती है, और सामाजिक विज्ञान अनुसंधान पद्धति की प्रकृति अज्ञानता का विनाश करती है। जब किसी सामाजिक विज्ञानों के अनुसंधान में हम वृद्धों की समस्याओं, मजदूरों का शोषण, महिलाओं का उत्पीड़न, समाज के शोषित वर्ग की समस्याएं एवं उत्पीड़न एवं उनकी सोचनीय कार्य दशाओं, बाल मजदूरी, महिला कामगारों की समस्याओं, भिक्षावृत्ति, वेश्यावृत्ति, बेरोजगारी आदि–आदि तथ्यों पर सामाजिक शोध करते हैं, तो उनके प्राप्त परिणामों से न केवल समाज कल्याण के क्षेत्र में सहायता प्राप्त होती है, बल्कि यह सामाजिक नीतियों के निर्माण की परिणीतियों को निर्मित करने का आधार भी होती है और सामाजिक अनुसंधान से सैद्धान्तिक एवं अवधारणात्मक ज्ञान भी विकसित होता है।

संदर्भ

गुडे, डब्ल्यू.जे. एंड हाट, पी.के. (1952): *मैथ्ड इन सोशियल रिसर्च.* टोक्यो : मैकग्रो हिल बुक कम्पनी; पीपी. 7–8

मूजर, सी.ए. (1961): *सर्वे मैथ्ड इन सोशियल इंवैस्टीगेशन;* पीपी. 3

पीयरसन, कार्ल (1911): द *ग्रामर आफ साइंस.* लन्दन : ए एंड सी ब्लॉक; पी. 10

रैड, विलियम जेम्स एंड फार्च्युन, एनी ई. (1999): *रिसर्च इन सोशियल वर्क;* तीसरा संस्करण, कोलम्बिया युनिवर्सिटी प्रैस; पीपी. 24–25.

वॉल्फ, ए. (1925): *एसैंसियल आफ साइंटिफिक मैथड्स* लन्दन : जार्ज एलेन एंड अनविन लि.; पी. 15.

यंग, पी.वी. (1968): *साइंटिफिक सोशियल सर्वे एंड रिसर्च.* नई दिल्ली: प्रेन्टिस हॉल आफ इंडिया प्रा.लि.; पीपी. 126–132

लेखकों के लिए

परिप्रेक्ष्य राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली से अप्रैल, अगस्त और दिसंबर में प्रकाशित की जाती है।

यह पत्रिका समाजवैज्ञानिकों और शैक्षिक योजना, प्रशासन और प्रबंध से जुड़े कार्मिकों तथा शोधकर्त्ताओं के शैक्षिक शोध और अनुभवों के आदान-प्रदान के लिए एक मंच प्रदान करती है।

इस पत्रिका में निम्नांकित स्तंभ हैं : 1. अनुसंधान लेख; 2. अनुसंधान टिप्पणी/संवाद; 3. अनुसंधान रिपोर्ट सार; 4. चिंतक और चिंतन; 5. साक्षात्कार; 6. समीक्षा लेख; 7. पुस्तक समीक्षाएं।

इस पत्रिका के लिए हिंदी/अंग्रेजी में लिखे अप्रकाशित मूल लेख आमंत्रित हैं। मूल हिंदी में लिखे नीतिगत नीतिगत और अनुभवाश्रित लेखों को प्राथमिकता दी जाएगी। लेखकों से अनुरोध है कि लेख की दो टंकित प्रतियां भेजें। पांडुलिपि फुलस्केप पेपर पर डबल स्पेस में एक ओर टंकित होनी चाहिए। लेख का सारसंक्षेप 150 शब्दों में अवश्य भेजें। लेख की साफ्ट कापी भी भेज सकते हैं। कृपया अलग पृष्ठ पर अपना संक्षिप्त परिचय अवश्य दें। पांडुलिपि में संदर्भ, टिप्पणी, संदर्भ ग्रंथ आदि का उल्लेख निम्नांकित रूप में दें :

* बिना टिप्पणी के सामान्य संदर्भ छोटे कोष्ठक में दें, जैसे- (नायक, 1972, पृ. 23-25)
* नायक, जे.पी. (1972) एजुकेशन कमीशन एण्ड आफ्टर, नई दिल्ली : एलायड
* मजूमदार, तपस (1987) ''द रोल ऑफ फायनेंस कमीशन'' जर्नल आफ एजुकेशनल प्लानिंग एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन, 1(2 & 4), जुलाई-अक्तूबर, पृ.1-11
* पंचमुखी, पी.आर. (1982) ''एजुकेशनल फायनेंसेज इन द फेडरल फ्रेमवर्क'' शिक्षा के लिए अतिरिक्त संसाधन जुटाने के उद्देश्य से गतिविधियां विषय पर नीपा, नई दिल्ली में आयोजित संगोष्ठी (मिमियोग्राफ)
* रेफ, हंस (1986), ''पर्सपेक्टिव प्लानिंग इन एजुकेशन : एन इंटरनेशनल व्यू'', मुनिस रज़ा (सं.), एजुकेशनल प्लानिंग : ए लांग टर्म पर्सपेक्टिव, नई दिल्ली, कांसेप्ट-नीपा में संकलित, पृ. 65-91
* टिप्पणी और संदर्भ सूची लेख के अंत में संख्याक्रम और हिंदी वर्णमाला क्रम में दें।

अकादमिक संपादकीय पूछताछ और अन्य जानकारी के लिए संपर्क करें :

संपादक परिप्रेक्ष्य, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (नीपा)
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110016. ई-मेल: sudhanshu@niepa.ac.in

ISSN 0972-7515

आगामी अंक में

आलेख

मनोरंजन मोहंती
भारत में स्नातक शिक्षा का संकट

तपन आर. मोहंती
निजी ट्यूशन के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक संदर्भ :
भारतीय अनुभव

सुषमा भट्ट
मध्य प्रदेश में नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 की धारा 29 के क्रियान्वयन की स्थिति : भोपाल जिले का केस अध्ययन

बीरेंद्र सिंह रावत
भाषा-शिक्षण में आलोचनात्मक शिक्षणशास्त्र का उपयोग

शोध टिप्पणी / संवाद

विनय कुमार कंठ
जन सांस्कृतिक आन्दोलन की वैचारिक, सांस्कृतिक एवं रचनात्मक चुनौतियाँ

गुंजन शर्मा
पास-फेल पर राजनीति : शिक्षा के अधिकार में दूसरा संशोधन

ऋषभ कुमार मिश्र
शिक्षा में विकल्प की तलाश

रंजय कुमार पटेल एवं **शिरीष पाल सिंह**
संस्कृत उपलब्धि परीक्षण का निर्माण एवं मानकीकरण

अन्य स्थाई स्तंभ